हरे कृष्ण

श्रीमद् भगवत गीता

अध्याय 7

|| भगवद्ज्ञान ||

designed by
DigitalWebdia | bhaktiprasad.in

1.

श्रीभगवानुवाच

bhaktiprasad.in

मय्यासक्तमनाः पार्थ योगं युञ्जन्मदाश्रयः |
असंशयं समग्रं मां यथा ज्ञास्यसि तच्छृणु || 7.1 ||

श्रीभगवान् ने कहा – हे पृथापुत्र! अब सुनो कि तुम किस तरह मेरी भावना से पूर्ण होकर और मन को मुझमें आसक्त करके योगाभ्यास करते हुए मुझे पूर्णतया संशयरहित जान सकते हो |

Now hear, O son of P⊠thā [Arjuna], how by practicing yoga in full consciousness of Me, with mind attached to Me, you can know Me in full, free from doubt.

designed by
DigitalWebdia

1.

तात्पर्य

भगवद्गीता के इस सातवें अध्याय में कृष्णभावनामृत की प्रकृति का विशद वर्णन हुआ है | कृष्ण समस्त ऐश्वर्यों से पूर्ण हैं और वे इन्हें किस प्रकार प्रकट करते हैं, इसका वर्णन इसमें हुआ है | इसके अतिरिक्त इस अध्याय में इसका भी वर्णन है कि चार प्रकार के भाग्यशाली व्यक्ति कृष्ण के प्रति आसक्त होते हैं और चार प्रकार के भाग्यहीन व्यक्ति कृष्ण की शरण में कभी नहीं आते | प्रथम छः अध्यायों में जीवात्मा को अभौतिक आत्मा के रूप में वर्णित किया गया है जो विभिन्न प्रकार के योगों द्वारा आत्म-साक्षात्कार को प्राप्त हो सकता है | छठे अध्याय के अन्त में यह स्पष्ट कहा गया है कि मन को कृष्ण पर एकाग्र करना या दूसरे शब्दों में कृष्णभावनामृत ही सर्वोच्च योग है | मन को कृष्ण पर एकाग्र करने से ही मनुष्य परमसत्य को पूर्णतया जान सकता है, अन्यथा नहीं | निर्विशेष ब्रह्मज्योति या अन्तर्यामी परमात्मा की अनुभूति परमसत्य का पूर्ण ज्ञान नहीं है, क्योंकि वह आंशिक होती है | कृष्ण ही पूर्ण तथा वैज्ञानिक ज्ञान हैं और कृष्णभावनामृत में ही मनुष्य को सारी अनुभूति होती है | पूर्ण कृष्णभावनामृत में मनुष्य जान पाता है कि कृष्ण ही निस्सन्देह परम ज्ञान हैं | विभिन्न प्रकार के योग तो कृष्णभावनामृत के मार्ग के सोपान सदृश हैं | जो व्यक्ति कृष्णभावनामृत ग्रहण करता है, वह स्वतः ब्रह्मज्योति तथा परमात्मा के विषय में पूरी तरह जान लेता है | कृष्णभावनामृत योग का अभ्यास करके मनुष्य सभी वस्तुओं को-यथा परमसत्य, जीवात्माएँ, प्रकृति तथा साज-सामग्री समेत उनके प्राकट्य को पूरी तरह जान सकता है | अतः मनुष्य को चाहिए कि छठे अध्याय के अन्तिम श्लोक के अनुसार योग का अभ्यास करे | परमेश्वर कृष्ण पर ध्यान की एकाग्रता को नवधा भक्ति के द्वारा सम्भव बनाया जाता है जिसमें श्रवणम् अग्रणी एवं महत्त्वपूर्ण है | अतः भगवान् अर्जुन से कहते हैं – तच्छृणु– अर्थात् "मुझसे सुनो" | कृष्ण से बढ़कर कोई प्रमाण नहीं, अतः उनसे सुनने का जिसे सौभाग्य प्राप्त होता है वह पूर्णतया कृष्णभावनाभावित हो जाता है | अतः मनुष्य को या तो साक्षात् कृष्ण से या कृष्ण के शुद्धभक्त से सीखना चाहिए, न कि अपनी शिक्षा का अभिमान करने वाले अभक्त से | परमसत्य श्रीभगवान् कृष्ण को जानने की विधि का वर्णन श्रीमद्भागवत के प्रथम स्कंध के द्वितीय अध्याय में इस प्रकार हुआ है –

तात्पर्य

शृण्वतां स्वकथाः कृष्णः पुण्यश्रवणकीर्तनः |
हृद्यन्तःस्थो ह्यभद्राणि विधुनोति सुहृत्सताम् ||

नष्टप्रायेष्वभद्रेषु नित्यं भागवतसेवया |
भगवत्युत्तमश्लोके भक्तिर्भवति नैष्ठिकी ||

तदा रजस्तमोभावाः कामलोभदयश्च ये |
चेत एतैरनाविद्धं स्थितं सत्त्वे प्रसीदति ||

एवं प्रसन्नमनसो भगवद्भक्तियोगतः |
भगवतत्त्वविज्ञानं मुक्तसंगस्य जायते ||

भिद्यते हृदयग्रंथिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः |
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि दृष्ट एवात्मनीश्वरे ||

तात्पर्य

"वैदिक साहित्य से श्रीकृष्ण के विषय में सुनना या भगवद्गीता से साक्षात् उन्हीं से सुनना अपने आपमें पुण्यकर्म है | और जो प्रत्येक हृदय में वास करने वाले भगवान् कृष्ण के विषय में सुनता है, उसके लिए वे शुभेच्छु मित्र की भाँति कार्य करते हैं और जो भक्त निरन्तर उनका श्रवण करता है, उसे वे शुद्ध कर देते हैं | इस प्रकार भक्त अपने सुप्त दिव्यज्ञान को फिर से पा लेता है | ज्यों-ज्यों वह भागवत तथा भक्तों से कृष्ण के विषय में अधिकाधिक सुनता है, त्यों-त्यों वह भगवद्भक्ति में स्थिर होता जाता है | भक्ति के विकसित होने पर वह रजो तथा तमो गुणों से मुक्त हो जाता है और इस प्रकार भौतिक काम तथा लोभ कम हो जाते हैं | जब ये कल्मष दूर हो जाते हैं तो भक्त सतोगुण में स्थिर हो जाता है, भक्ति के द्वारा स्फूर्ति प्राप्त करता है और भगवत्-तत्त्व को पूरी तरह जान लेता है | भक्तियोग भौतिक मोह की कठिन ग्रंथि को भेदता है और भक्त को असंशयं समग्रम् अर्थात् परम सत्य श्रीभगवान् को समझने की अवस्था को प्राप्त कराता है (भागवत् १.२.१७-२१) |"

अतः श्रीकृष्ण से या कृष्णभावनामृत भक्तों के मुखों से सुनकर ही कृष्णतत्त्व को जाना जा सकता है |

2.

bhaktiprasad.in

ज्ञानं तेऽहं सविज्ञानमिदं वक्ष्याम्यशेषतः |
यज्ज्ञात्वा नेह भूयोऽन्यज्ज्ञातव्यमवशिष्यते || 7.2 ||

अब मैं तुमसे पूर्णरूप से व्यावहारिक तथा दिव्यज्ञान कहूँगा | इसे जान लेने पर तुम्हें जानने के लिए और कुछ भी शेष नहीं रहेगा |

I shall now declare unto you in full this knowledge both phenomenal and noumenal, by knowing which there shall remain nothing further to be known.

designed by
DigitalWebdia

तात्पर्य

पूर्णज्ञान में प्रत्यक्ष जगत्, इसके पीछे काम करने वाला आत्मा तथा इन दोनों के उद्गम सम्मिलित हैं | यह दिव्यज्ञान है | भगवान् उपर्युक्त ज्ञानपद्धति बताना चाहते हैं, क्योंकि अर्जुन उनका विश्वस्त भक्त तथा मित्र है | चतुर्थ अध्याय के प्रारम्भ में इसकी व्याख्या भगवान् कृष्ण ने की और उसी की पुष्टि यहाँ पर हो रही है | भगवद्भक्त द्वारा पूर्णज्ञान का लाभ भगवान् से प्रारम्भ होने वाली गुरु-परम्परा से ही किया जा सकता है | अतः मनुष्य को इतना बुद्धिमान तो होना ही चाहिए कि वह समस्त ज्ञान के अद्गम को जान सके, जो समस्त कारणों के कारणहै और समस्त योगों में ध्यान का एकमात्र लक्ष्य है | जब समस्त कारणों के कारण का पता चल जाता है, तो सभी ज्ञेय वस्तुएँ ज्ञात हो जाती हैं और कुछ भी अज्ञेय नहीं रह जाता | वेदों का (मुण्डक उपनिषद् १.३) कहना है – कस्मिन् भगवो विज्ञाते सर्वमिदं विज्ञातं भवति|

3.

bhaktiprasad.in

मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये |
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्त्वतः || 7.3 ||

कई हजार मनुष्यों में से कोई एक सिद्धि के लिए प्रयत्नशील होता है और इस तरह सिद्धि प्राप्त करने वालों में से विरला ही कोई मुझे वास्तव में जान पाता है |

Out of many thousands among men, one may endeavor for perfection, and of those who have achieved perfection, hardly one knows Me in truth.

designed by
DigitalWebdia

तात्पर्य

मनुष्यों की विभिन्न कोटियाँ हैं और हजारों मनुष्यों में से शायद विरला मनुष्य ही यह जानने में रूचि रखता है कि आत्मा क्या है, शरीर क्या है, और परमसत्य क्या है | सामान्यतया मानव आहार, निद्रा, भय तथा मैथुन जैसी पशुवृत्तियों में लगा रहता है और मुश्किल से कोई एक दिव्यज्ञान में रूचि रखता है | गीता के प्रथम छह अध्याय उन लोगों के लिए हैं जिनकी रूचि दिव्यज्ञान में, आत्मा, परमात्मा तथा ज्ञानयोग, ध्यानयोग द्वारा अनुभूति की क्रिया में तथा पदार्थ से आत्मा के पार्थक्य को जानने में है | किन्तु कृष्ण तो केवल उन्हीं व्यक्तियों द्वारा ज्ञेय हैं जो कृष्णभावनाभावित हैं | अन्य योगी निर्विशेष ब्रह्म-अनुभूति प्राप्त कर सकते हैं, क्योंकि कृष्ण को जानने की अपेक्षा यह सुगम है | कृष्ण परमपुरुष हैं, किन्तु साथ ही वे ब्रह्म तथा परमात्मा-ज्ञान से परे हैं | योगी तथा ज्ञानीजन कृष्ण को नहीं समझ पाते | यद्यपि महानतम निर्विशेषवादी (मायावादी) शंकराचार्य ने अपने गीता– भाष्य में स्वीकार किया है कि कृष्ण भगवान् हैं, किन्तु उनके अनुयायी इसे स्वीकार नहीं करते,क्योंकि भले ही किसी को निर्विशेष ब्रह्म की दिव्य अनुभूति क्यों न हो, कृष्ण को जान पाना अत्यन्त कठिन है |कृष्ण भगवान् समस्त कारणों के कारण, आदि पुरुष गोविन्द हैं | *ईश्वरः परमः कृष्णः सच्चिदानन्द विग्रहः| अनादिरादिर्गोविन्दः सर्वकारणकारणम्*| अभक्तों के लिए उन्हें जान पाना अत्यन्त कठिन है | यद्यपि अभक्तगण यह घोषित करते हैं कि भक्ति का मार्ग सुगम है, किन्तु वे इस पर चलते नहीं | यदि भक्तिमार्ग इतना सुगम है जितना अभक्तगण कहते हैं तो फिर वे कठिन मार्ग को क्यों ग्रहण करते हैं? वास्तव में भक्तिमार्ग सुगम नहीं है | भक्ति के ज्ञान में हीन अनधिकारी लोगों द्वारा ग्रहण किया जाने वाला तथाकथित भक्तिमार्ग भले ही सुगम हो, किन्तु जब विधि-विधानों के अनुसार दृढ़तापूर्वक इसका अभ्यास किया जाता है तो मीमांसक तथा दार्शनिक इस मार्ग से च्युत हो जाते हैं | श्रील रूप गोस्वामी अपनी कृति भक्तिरसामृत सिन्धु में (१.२.१०१) लिखते हैं –

तात्पर्य

श्रुति स्मृतिपुराणादि पञ्चरात्रविधिं विना | एकान्तिकी हरेर्भक्तिरुत्पातायैव कल्पते || "वह भगवद्भक्ति, जो उपनिषदों, पुराणों तथा नारद पंचरात्र जैसे प्रामाणिक वैदिक ग्रंथों की अवहेलना करती है, समाज में व्यर्थ ही अव्यवस्था फैलाने वाली है |" ब्रह्मवेत्ता निर्विशेषवादी या परमात्मावेत्ता योगी भगवान् श्रीकृष्ण को यशोदा-नन्दन या पार्थासारथी के रूप में कभी नहीं समझ सकते | कभी-कभी बड़े-बड़े देवता भी कृष्ण के विषय में भ्रमित हो जाते हैं – मुह्यन्ति यत्सूरयः | मां तु वेद न कश्चन – भगवान् कहते हैं कि कोई भी मुझे उस रूप में तत्त्वतः नहीं जानता, जैसा मैं हूँ | और यदि कोई जानता है – स महात्मा सुदुर्लभः– तो ऐसा महात्मा विरला होता है | अतः भगवान् की भक्ति किये बिना कोई भगवान् को तत्त्वतः नहीं जान पाता, भले ही वह महान विद्वान् या दार्शनिक क्यों न हो | केवल शुद्ध भक्त ही कृष्ण के अचिन्त्य गुणों को सब कारणों के कारण रूप में उनकी सर्वशक्तिमत्ता तथा ऐश्वर्य, उनकी सम्पत्ति, यश, बल, सौन्दर्य, ज्ञान तथा वैराग्य के विषय में कुछ-कुछ जान सकता है, क्योंकि कृष्ण अपने भक्तों पर दयालु होते हैं | ब्रह्म-साक्षात्कार की वे पराकाष्ठा हैं और केवल भक्तगण ही उन्हें तत्त्वतः जान सकते हैं | अतएव भक्तिरसामृत सिन्धु में (१.२.२३४) कहा गया है –

अतः श्रीकृष्णनामादि न भवेद्ग्राह्यमिन्द्रियैः |
सेवोन्मुखे हि जिह्वादौ स्वयमेव स्फुरत्यदः ||

"कुंठित इन्द्रियों के द्वारा कृष्ण को तत्त्वतः नहीं समझा जा सकता | किन्तु भक्तों द्वारा की गई अपनी दिव्यसेवा से प्रसन्न होकर वे भक्तों को आत्मतत्त्व प्रकाशित करते हैं |"

4.

bhaktiprasad.in

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च |
अहंकार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा || 7.4 ||

पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि तथा अहंकार – ये आठ प्रकार से विभक्त मेरी भिन्ना (अपर) प्रकृतियाँ हैं |

Earth, water, fire, air, ether, mind, intelligence and false ego-altogether these eight comprise My separated material energies.

designed by
DigitalWebdia

4.

तात्पर्य

ईश्वर-विज्ञान भगवान् की स्वाभाविक स्थिति तथा उनकी विविध शक्तियों का विश्लेषण है | भगवान् के विभिन्न पुरुष अवतारों (विस्तारों) की शक्ति को प्रकृति कहा जाता है, जैसा कि सात्वततन्त्र में उल्लेख मिलता है – *विष्णोस्तु त्रीणि रूपाणि पुरुषाख्यान्यथो विदुः | एकं तु महतः स्रष्टृ द्वितीयं त्वण्डसंस्थितम् | तृतीयं सर्वभूतस्थं तानि ज्ञात्वा विमुच्यते ||* "सृष्टि के लिए भगवान् कृष्ण का स्वांश तीन विष्णुओं का रूप धारण करता है | पहले महाविष्णु हैं, जो सम्पूर्ण भौतिक शक्ति महत्तत्व को उत्पन्न करते हैं | द्वितीय गर्भोदकशायी विष्णु हैं, जो समस्त ब्रह्माण्डों में प्रविष्ट होकर उनमें विविधता उत्पन्न करते हैं | तृतीय क्षीरोदकशायी विष्णु हैं जो समस्त ब्रह्माण्डों में सर्वव्यापी परमात्मा केरूप में फैले हुए हैं और परमात्मा कहलाते हैं | वे प्रत्येक परमाणु तक के भीतर उपस्थित हैं | जो भी इन तीनों विष्णु रूपों को जानता है, वह भवबन्धन से मुक्त हो सकता है |" यह भौतिक जगत् भगवान् की शक्तियों में से एक का क्षणिक प्राकट्य है | इस जगत् की सारी क्रियाएँ भगवान् कृष्ण के इन तीनों विष्णु अंशों द्वारा निर्देशित हैं | ये पुरुष अवतार कहलाते हैं | सामान्य रूप से जो व्यक्ति ईश्वर तत्त्व (कृष्ण) को नहीं जानता, वह यह मान लेता है कि यह संसार जीवों के भोग के लिए है और सारे जीव पुरुष हैं – भौतिक शक्ति के कारण, नियन्ता तथा भोक्ता हैं | भगवद्गीता के अनुसार यह नास्तिक निष्कर्ष झूठा है | प्रस्तुत श्लोक में कृष्ण को इस जगत् का आदि कारण माना गया है | श्रीमद्भागवत में भी इसकी पुष्टि होती है | भगवान् की पृथक्-पृथक् शक्तियाँ इस भौतिक जगत् के घटक हैं | यहाँ तक कि निर्विशेषवादियों का चरमलक्ष्य ब्रह्मज्योति भी एक अध्यात्मिक शक्ति है, जो परव्योम में प्रकट होती है | ब्रह्मज्योति में वैसी भिन्नताएँ नहीं, जैसी कि वैकुण्ठलोकों में हैं, फिर भी निर्विशेषवादी इस ब्रह्मज्योति को चरम शाश्वत लक्ष्य स्वीकार करते हैं | परमात्मा की अभिव्यक्ति भी क्षीरोदकशायी विष्णु का एक क्षणिक सर्वव्यापी पक्ष है |

तात्पर्य

आध्यात्मिक जगत् में परमात्मा की अभिव्यक्ति शाश्वत नहीं होती |अतः यथार्थ परमसत्य तो श्रीभगवान् कृष्ण हैं | वे पूर्ण शक्तिमान पुरुष हैं और उनकी नाना प्रकार की भिन्ना तथा अन्तरंगा शक्तियाँ होती हैं |

जैसा की ऊपर कहा जा चुका है, भौतिक शक्ति आठ प्रधान रूपों में व्यक्त होती है | इनमें से प्रथम पाँच – पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा आकाश स्थूल अथवा विराट सृष्टियाँ कहलाती हैं, जिनमें पाँच इन्द्रियविषय, जिनके नाम हैं – शब्द, स्पर्श, रूप, रस, तथा गंध – सम्मिलित रहते हैं | भौतिक विज्ञान में ये ही दस तत्त्व हैं | किन्तु अन्य तीन तत्त्वों को, जिनके नाम मन, बुद्धि तथा अहंकार हैं, भौतिकतावादी उपेक्षित रखते हैं | दार्शनिक भी, जो मानसिक कार्यकलापों से संबंध रखते हैं, पूर्णज्ञानी नहीं है, क्योंकि वे परम उद्गम कृष्ण को नहीं जानते | मिथ्या अहंकार – 'मैं हूँ' तथा 'यह मेरा है' – जो कि संसार का मूल कारण है इसमें विषयभोग की दस इन्द्रियों का समावेश है | बुद्धि महत्तत्व नामक समग्र भौतिक सृष्टि की सूचक है | अतः भगवान् की आठ विभिन्न शक्तियों से जगत् के चौबीस तत्त्व प्रकट हैं, जो नास्तिक सांख्यदर्शन के विषय हैं | ये मूलतः कृष्ण की शक्तियों की उपशाखाएँ हैं और उनसे भिन्न हैं, किन्तु नास्तिक सांख्य दार्शनिक अल्पज्ञान के कारण यह नहीं जान पाते कि कृष्ण समस्त कारणों के कारण हैं | जैसा कि भगवद्गीता में कहा गया है, सांख्यदर्शन की विवेचना का विषय कृष्ण की बहिरंगा शक्ति का प्राकट्य है |

5.

bhaktiprasad.in

अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम् |
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत्|| 7.5 ||

हे महाबाहु अर्जुन ! इनके अतिरिक्त मेरी एक अन्य परा शक्ति है जो उन जीवों से युक्तहै, जो इस भौतिक अपरा प्रकृति के साधनों का विदोहन कर रहे हैं |

Besides this inferior nature, O mighty-armed Arjuna, there is a superior energy of Mine, which are all living entities who are struggling with material nature and are sustaining the universe.

designed by DigitalWebdia

5.

तात्पर्य

इस श्लोक में स्पष्ट कहा गया है कि जीव परमेश्वर की परा प्रकृति (शक्ति) है | अपरा शक्ति तो पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, मन, बुद्धि तथा अहंकार जैसे विभिन्न तत्त्वों के रूप में प्रकट होती है | भौतिक प्रकृति के ये दोनों रूप-स्थूल (पृथ्वी आदि) तथा सूक्ष्म (मन आदि) – अपरा शक्ति के ही प्रतिफल हैं | जीव जो अपने विभिन्न कार्यों के लिए अपरा शक्तियों का विदोहन करता रहता है, स्वयं परमेश्वर की परा शक्ति है और यह वही शक्ति है जिसके कारण संसार कार्यशील है | इस दृश्यजगत् में कार्य करने की तब तक शक्ति नहीं आती, जब तक परा शक्ति अर्थात् जीव द्वारा यह गतिशील नहीं बनाया जाता | शक्ति का नियन्त्रण सदैव शक्तिमान करता है, अतः जीव सदैव भगवान् द्वारा नियन्त्रित होते हैं | जीवों का अपना कोई स्वतन्त्र अस्तित्व नहीं है | वे कभी भी सम शक्तिमान नहीं, जैसा कि बुद्धिहीन मनुष्य सोचते हैं | श्रीमद्भागवत में (१०.८७.३०) जीव तथा भगवान् के अन्तर को इस प्रकार बताया गया है –

अपरिमिता ध्रुवास्तनुभृतो यदि सर्वगता- स्तर्हि न शास्यतेति नियमो ध्रुव नेतरथा | अजनि च यन्मयं तदविमुच्य नियन्तृ भवेत् सममनुजानतां यदमतं मतदृष्टतया ||

5.1

तात्पर्य

"हे परम शाश्वत ! यदि सारे देहधारी जीव आप ही की तरह शाश्वत एवं सर्वव्यापी होते तो वे आपके नियन्त्रण में न होते | किन्तु यदि जीवों को आपकी सूक्ष्म शक्ति के रूप में मान लिया जाय तब तो वे सभी आपके परम नियन्त्रण में आ जाते हैं | अतः वास्तविक मुक्ति तो आपकी शरण में जाना है और इस शरणागति से वे सुखी होंगे | उस स्वरूप में ही वे नियन्ता बन सकते हैं | अतः अल्पज्ञ पुरुष, जो अद्वैतवाद के पक्षधर हैं और इस सिद्धान्त का प्रचार करते हैं कि भगवान् और जीव सभी प्रकार से एक दूसरे के समान हैं, वास्तव में वे प्रदूषित मत द्वारा निर्देशित होते हैं |" परमेश्वर कृष्ण ही एकमात्र नियन्ता हैं और सारे जीव उन्हीं के द्वारा नियन्त्रित हैं | सारे जीव उनकी पराशक्ति हैं, क्योंकि उनके गुण परमेश्वर के समान हैं, किन्तु वे शक्ति की मात्रा के विषय में कभी भी समान नहीं है | अतुल तथा सूक्ष्म अपराशक्ति का उपभोग करते हुए पराशक्ति (जीव) को अपने वास्तविक मन तथा बुद्धि की विस्मृति हो जाती है | इस विस्मृति का कारण जीव परजड़ प्रकृति का प्रभाव है | किन्तु जब जीव माया के बन्धन से मुक्त हो जाता है, तो उसे मुक्ति-पद प्राप्त होता है | माया के प्रभाव में आकर अहंकार सोचता है, "मैं ही पदार्थ हूँ और सारी भौतिक उपलब्धि मेरी है |" जब वह सारे भौतिक विचारों से, जिनमें भगवान् के साथ तादात्म्य भी सम्मिलित है, मुक्त हो जाता है, तो उसे वास्तविक स्थिति प्राप्त होती है | अतः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि गीता जीव को कृष्ण की अनेक शक्तियों में से एक मानती है और जब यह शक्ति भौतिक कल्मष से मुक्त हो जाती है, तो यह पूर्णतयाकृष्णभावनाभावित या बन्धन मुक्त हो जाती है |

6.

bhaktiprasad.in

एतद्योनीनि भूतानि सर्वाणीत्युपधारय |
अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा || 7.6 ||

सारे प्राणियों का उद्गम इन दोनों शक्तियों में है | इस जगत् में जो कुछ भी भौतिक तथा आध्यात्मिक है, उसकी उत्पत्ति तथा प्रलय मुझे ही जानो |

Of all that is material and all that is spiritual in this world, know for certain that I am both its origin and dissolution.

designed by
DigitalWebdia

तात्पर्य

जितनी वस्तुएँ विद्यमान हैं, वे पदार्थ तथा आत्मा के प्रतिफल हैं | आत्मा सृष्टि का मूल क्षेत्र है और पदार्थ आत्मा द्वारा उत्पन्न किया जाता है | भौतिक विकास की किसी भी अवस्था में आत्मा की उत्पत्ति नहीं होती, अपितु यह भौतिक जगत् आध्यात्मिक शक्ति के आधार पर ही प्रकट होता है | इस भौतिक शरीर का इसीलिए विकास हुआ क्योंकि इसके भीतर आत्मा उपस्थित है | एक बालक धीरे-धीरे बढ़कर कुमार तथा अन्त में युवा बन जाता है, क्योंकि उसके भीतर आत्मा उपस्थित है | इसी प्रकार इस विराट ब्रह्माण्ड की समग्र सृष्टि का विकास परमात्मा विष्णु की उपस्थिति के कारण होता है | अतः आत्मा तथा पदार्थ मूलतः भगवान् की दो शक्तियाँ हैं, जिनके संयोग से विराट ब्रह्माण्ड प्रकट होता है | अतः भगवान् ही सभी वस्तुओं के आदि कारण हैं | भगवान् का अंश रूप जीवात्मा भले ही किसी गगनचुम्बी प्रासाद या किसी महान कारखाने या किसी महानगर का निर्माता हो सकता है, किन्तु वह विराट ब्रह्माण्ड का कारण नहीं हो सकता | इस विराट ब्रह्माण्ड का स्त्रष्टा भी विराट आत्मा या परमात्मा है | और परमेश्वर कृष्ण विराट तथा लघु दोनों ही आत्माओं के कारण हैं | अतः वे समस्त कारणों के कारण है | इसकी पुष्टि कठोपषद् में (२.२.१३) हुई है – *नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनानाम्*|

7.

bhaktiprasad.in

मत्तः परतरं नान्यत्किञ्चिदस्ति धनञ्जय |
मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव || 7.7 ||

हे धनञ्जय! मुझसे श्रेष्ठ कोई सत्य नहीं है | जिस प्रकार मोती धागे में गुँथे रहते हैं, उसी प्रकार सब कुछ मुझ पर ही आश्रित है |

O conquerer of wealth [Arjuna], there is no Truth superior to Me. Everything rests upon Me, as pearls are strung on a thread.

designed by
DigitalWebdia

तात्पर्य

परमसत्य साकार है या निराकार, इस पर सामान्य विवाद चलता है | जहाँ तक भगवद्गीता का प्रश्न है, परमसत्य तो श्रीभगवान् श्रीकृष्ण हैं और इसकी पुष्टि पद-पद पर होती है | इस श्लोक में विशेष रूप से बल है कि परमसत्य पुरुष रूप है | इस बात की कि भगवान् ही परमसत्य हैं, ब्रह्मसंहिता में भी पुष्टि हुई है – ईश्वरः परमः कृष्णः सच्चिदानन्द विग्रहः – परमसत्य श्रीभगवान् कृष्ण ही हैं, जो आदि पुरुष हैं | समस्त आनन्द के आगार गोविन्द हैं और वे सच्चिदानन्द स्वरूप हैं | ये सब प्रमाण निर्विवाद रूप से प्रमाणित करते हैं कि परम सत्य पुरुष हैं जो समस्त कारणों का कारण हैं | फिर भी निरीश्वरवादी श्वेताश्वतर उपनिषद् में (३.१०) उपलब्ध वैदिक मन्त्र के आधार पर तर्क देते हैं – ततो यदुत्तरतरं तदरूपमनामयं | य एतद्विदुरमृतास्ते भवन्त्यथेतरे दुःखमेवापियन्ति– "भौतिक जगत् में ब्रह्माण्ड के आदि जीव ब्रह्मा को देवताओं, मनुष्यों तथा निम्न प्राणियों में सर्वश्रेष्ठ माना जाता है | किन्तु ब्रह्मा के परे एक इन्द्रियातीत ब्रह्म है जिसका कोई भौतिक स्वरूप नहीं होता और वो समस्त भौतिक कल्मष से रहित होता है | जो व्यक्ति उसे जान लेता है वह भी दिव्य बन जाता है, किन्तु जो उसे नहीं जान पाते, वे सांसारिक दुखों को भोगते रहते हैं |" निर्विशेषवादी अरूपम् शब्द पर विशेष बल देते हैं | किन्तु यह अरूपम् शब्द निराकार नहीं है | यह दिव्य सच्चिदानन्द स्वरूप का सूचक है , जैसा कि ब्रह्मसंहिता में वर्णित है और ऊपर उद्धृत है | श्वेताश्वतर उपनिषद् के अन्य श्लोकों (३.८-९) से भी इसकी पुष्टि होती है –

तात्पर्य

वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् |
तमेव विद्वानति मृत्युमति नान्यः पन्था विद्यतेऽयनाय ||
यस्मात्परं नापरमस्ति किञ्चिद् यस्मान्नाणीयो नो ज्यायोऽति किञ्चित् |
वृक्ष इव स्तब्धो दिवि तिष्ठत्येकस्तेनेदं पूर्णं पुरुषेण सर्वम् ||

"मैं उन भगवान् को जानता हूँ जो अंधकार की समस्त भौतिक अनुभूतियों से परे हैं | उनको जानने वाला ही जन्म तथा मृत्यु के बन्धन का उल्लंघन कर सकता है | उस परमपुरुष के इस ज्ञान के अतिरिक्त मोक्ष का कोई अन्य साधन नहीं है |"
"उन परमपुरुष से बढ़कर कोई सत्य नहीं क्योंकि वे श्रेष्ठतम हैं | वे सूक्ष्म से भी सूक्ष्मतर हैं और महान से भी महानतर हैं | वे मूक वृक्ष के समान स्थित हैं और दिव्य आकाश को प्रकाशित करते हैं | जिस प्रकार वृक्ष अपनी जड़ें फैलाता है, ये भी अपनी विस्तृत शक्तियों का प्रसार करते हैं |" इस श्लोकों से निष्कर्ष निकलता है कि परमसत्य ही श्रीभगवान् हैं, जो अपनी विविध परा-अपरा शक्तियों के द्वारा सर्वव्यापी हैं |

8.

bhaktiprasad.in

रसोऽहमप्सु कौन्तेय प्रभास्मि शशिसुर्ययोः |
प्रणवः सर्ववेदेषु शब्दः खे पौरुषं नृषु || 7.8 ||

हे कुन्तीपुत्र ! मैं जल का स्वाद हूँ, सूर्य तथा चन्द्रमा का प्रकाश हूँ, वैदिक मन्त्रों में ओंकार हूँ, आकाश में ध्वनि हूँ तथा मनुष्य में सामर्थ्य हूँ |

O son of Kuntī [Arjuna], I am the taste of water, the light of the sun and the moon, the syllable om in the Vedic mantras; I am the sound in ether and ability in man.

designed by
DigitalWebdia

तात्पर्य

यह श्लोक बताता है कि भगवान् किस प्रकार अपनी विविध परा तथा अपरा शक्तियों द्वारा सर्वव्यापी हैं | परमेश्वर की प्रारम्भिक अनुभूति उनकी विभिन्न शक्तियों द्वारा हो सकती है और इस प्रकार उनका निराकार रूप में अनुभव होता है | जिस प्रकार सूर्यदेवता एक पुरुष है और सर्वव्यापी शक्ति – सूर्यप्रकाश – द्वारा अनुभव किया जाता है, उसी प्रकार भगवान् अपने धाम में रहते हुए भी अपनी सर्वव्यापी शक्तियों द्वारा अनुभव किये जाते हैं | जल का स्वाद जल का मूलभूत गुण है | कोई भी व्यक्ति समुद्र का जल नहीं पीना चाहता क्योंकि इसमें शुद्ध जल के स्वाद के साथ साथ नमक मिला रहता है | जल के प्रति आकर्षण का कारण स्वाद की शुद्धि है और यह शुद्ध स्वाद भगवान् की शक्तियों में से एक है | निर्विशेषवादी व्यक्ति जल में भगवान् की उपस्थिति जल के स्वाद के कारण अनुभव करता है और सगुणवादी भगवान् का गुणगान करता है, क्योंकि वे प्यास बुझाने के लिए सुस्वादु जल प्रदान करते हैं | परमेश्वर को अनुभव करने की यही विधि है | व्यव्हारतः सगुणवाद तथा निर्विशेषवाद में कोई मतभेद नहीं है | जो ईश्वर को जानता है वह यह भी जानता है कि प्रत्येक वस्तु में एकसाथ सगुणबोध तथा निर्गुणबोध निहित होता है और इनमें कोई विरोध नहीं है | अतः भगवान् चैतन्य ने अपना शुद्ध सिद्धान्त प्रतिपादित किया जो अचिन्त्य भेदाभेद-तत्त्व कहलाता है | सूर्य तथा चन्द्रमा का प्रकाश भी मूलतः ब्रह्मज्योति से निकलता है, जो भगवान् का निर्विशेष प्रकाश है | प्रणव या ओंकार प्रत्येक वैदिक मन्त्र के प्रारम्भ में भगवान् को सम्बोधित करने के लिए प्रयुक्त दिव्य ध्वनि है | चूँकि निर्विशेषवादी परमेश्वर कृष्ण को उनके असंख्य नामों के द्वारा पुकारने से भयभीत रहते हैं, अतः वे ओंकार का उच्चारण करते हैं, किन्तु उन्हें इसकी तनिक भी अनुभूति नहीं होती कि ओंकार कृष्ण का शब्द स्वरूप है | कृष्णभावनामृत का क्षेत्र व्यापक है और जो इस भावनामृत को जानता है वह धन्य है | जो कृष्ण को नहीं जानते वे मोहग्रस्त रहते हैं | अतः कृष्ण का ज्ञान मुक्ति है और उनके प्रति अज्ञान बन्धन है |

9.

bhaktiprasad.in

पुण्यो गन्धः पृथिव्यां च तेजश्चास्मि विभावसौ |
जीवनं सर्वभूतेषु तपश्चास्मि तपस्विषु || 7.9 ||

मैं पृथ्वी की आद्य सुगंध और अग्नि की ऊष्मा हूँ | मैं समस्त जीवों का जीवन तथा तपस्वियों का तप हूँ|

I am the original fragrance of the earth, and I am the heat in fire. I am the life of all that lives, and I am the penances of all ascetics.

designed by
DigitalWebdia

9.

तात्पर्य

पुण्य का अर्थ है – जिसमें विकार न हो, अतः आद्य | इस जगत में प्रत्येक वस्तु में कोई न कोई सुगंध होती है, यथा फूल की सुगंध या जल, पृथ्वी, अग्नि, वायु आदि की सुगंध | समस्त वस्तुओं में व्याप्त अदूषित भौतिक गन्ध, जो आद्य सुगंध है, वह कृष्ण हैं | इसी प्रकार प्रत्येक वस्तु का एक विशिष्ट स्वाद (रस) होता है और इस स्वाद को रसायनों के मिश्रण द्वारा बदला जा सकता है | अतः प्रत्येक मूल वस्तु में कोई न कोई गन्ध तथा स्वाद होता है | विभावसु का अर्थ अग्नि है | अग्नि के बिना न तो फैक्टरी चल सकती है, न भोजन पक सकता है | यह अग्नि कृष्ण है | अग्नि का तेज (ऊष्मा) भी कृष्ण ही है | वैदिक चिकित्सा के अनुसार कुपच का कारण पेट में अग्नि की मंदता है | अतः पाचन तक के लिए अग्नि आवश्यक है | कृष्णभावनामृत में हम इस बात से अवगत होते हैं कि पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु तथा प्रत्येक सक्रीय तत्त्व, सारे रसायन तथा सारे भौतिक तत्त्व कृष्ण के कारण हैं | मनुष्य की आयु भी कृष्ण के कारण है | अतः कृष्ण कृपा से ही मनुष्य अपने को दीर्घालु या अल्पजीवी बना सकता है | अतः कृष्णभावनामृत प्रत्येक क्षेत्र में सक्रीय रहता है |

10.

bhaktiprasad.in

बीजं मां सर्वभूतानां विद्धि पार्थ सनातनम् |
बुद्धिर्बुद्धिमतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम् || 7.10 ||

हे पृथापुत्र ! यह जान लो कि मैं ही समस्त जीवों का आदि बीज हूँ, बुद्धिमानों की बुद्धि तथा समस्त तेजस्वी पुरुषों का तेज हूँ |

O son of P⊠thā, know that I am the original seed of all existences, the intelligence of the intelligent, and the prowess of all powerful men.

designed by
DigitalWebdia

तात्पर्य

कृष्ण समस्त पदार्थों के बीज हैं | कई प्रकार के चर तथा अचर जीव हैं | पक्षी, पशु, मनुष्य तथा अन्य सजीव प्राणी चर हैं, पेड़ पौधे अचर हैं – वे चल नहीं सकते, केवल खड़े रहते हैं | प्रत्येक जीव चौरासी लाख योनियों के अन्तर्गत है, जिनमे से कुछ चार हैं और कुछ अचर | किन्तु इस सबके जीवन के बीजस्वरूप श्रीकृष्ण हैं | जैसा कि वैदिक साहित्य में कहा गया है ब्रह्म या परमसत्य वह है जिससे प्रत्येक वस्तु उद्भुत है | कृष्ण परब्रह्म या परमात्मा हैं | ब्रह्म तो निर्विशेष है, किन्तु परब्रह्म साकार है | निर्विशेष ब्रह्म साकार रूप में आधारित है – यह भगवद्गीता में कहा गया है | अतः आदि रूप में कृष्ण समस्त वस्तुओं के उद्गम हैं | वे मूल हैं | जिस प्रकार मूल सारे वृक्ष का पालन करता है उसी प्रकार कृष्ण मूल होने के करण इस जगत् के समस्त प्राणियों का पालन करते हैं | इसकी पुष्टि वैदिक साहित्य में (कठोपनिषद् २.२.१३) हुई है – *नित्यो नित्यानां चेतनश्चेतनाना, म्एको बहूनां यो विदधाति कमान्* | वे समस्त नित्यों के नित्य हैं | वे समस्त जीवों के परम जीव हैं और वे ही समस्त जीवों का पालन करने वाले हैं | मनुष्य बुद्धि के बिना कुछ भी नहीं कर सकता और कृष्ण भी कहते हैं कि मैं समस्त बुद्धि का मूल हूँ | जब तक मनुष्य बुद्धिमान नहीं होता, वह भगवान् कृष्ण को नहीं समझ सकता |

11.

bhaktiprasad.in

बलं बलवतां चाहं कामरागविवर्जितम् |
धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ || 7.11 ||

मैं बलवानों का कामनाओं तथा इच्छा से रहित बल हूँ | हे भरतश्रेष्ठ (अर्जुन) ! मैं वह काम हूँ, जो धर्म के विरुद्ध नहीं है |

I am the strength of the strong, devoid of passion and desire. I am sex life which is not contrary to religious principles, O Lord of the Bhāratas [Arjuna].

designed by DigitalWebdia

तात्पर्य

बलवान पुरुष की शक्ति का उपयोग दुर्बलों की रक्षा के लिए होना चाहिए, व्यक्तिगत आक्रमण के लिए नहीं | इसी प्रकार धर्म-सम्मत मैथुन सन्तानोन्पति के लिए होना चाहिए, अन्य कार्यों के लिए नहीं | अतः माता-पिता का उत्तरदायित्व है कि वे अपनी सन्तान को कृष्णभावनाभावित बनाएँ |

12.

bhaktiprasad.in

ये चैव सात्त्विका भावा राजसास्तामसाश्च ये |
मत्त एवेति तान्विद्धि न त्वहं तेषु ते मयि || 7.12 ||

तुम जान लो कि मेरी शक्ति द्वारा सारे गुण प्रकट होते हैं, चाहे वे सतोगुण हों, रजोगुण हों या तमोगुण हों | एक प्रकार से मैं सब कुछ हूँ, किन्तु हूँ स्वतन्त्र | मैं प्रकृति के गुणों के अधीन नहीं हूँ, अपितु वे मेरे अधीन हैं |

All states of being-be they of goodness, passion or ignorance-are manifested by My energy. I am, in one sense, everything-but I am independent. I am not under the modes of this material nature.

designed by
DigitalWebdia

तात्पर्य

संसार के सारे भौतिक कार्यकलाप प्रकृति के गुणों के अधीन सम्पन्न होते हैं | यद्यपि प्रकृति के गुण परमेश्वर कृष्ण से उद्भूत हैं, किन्तु भगवान् उनके अधीन नहीं होते | उदाहरणार्थ, राज्य के नियमानुसार कोई दण्डित हो सकता है, किन्तु नियम बनाने वाला राजा उस नियम के अधीन नहीं होता | इसी प्रकार प्रकृति के सभी गुण – सतो, रजो तथा तमोगुण – भगवान् कृष्ण से उद्भूत हैं, किन्तु कृष्ण प्रकृति के अधीन नहीं हैं | इसीलिए वे निर्गुण हैं, जिसका तात्पर्य है कि सभी गुण उनसे उद्भूत हैं, किन्तु ये उन्हें प्रभावित नहीं करते | यह भगवान् का विशेष लक्षण है |

13.

bhaktiprasad.in

त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत् |
मोहितं नाभिजानाति मामेभ्यः परमव्ययम् || 7.13 ||

तीन गुणों (सतो, रजो तथा तमो) के द्वारा मोहग्रस्त यह सारा संसार मुझ गुणातीत तथा अविनाशी को नहीं जानता |

Deluded by the three modes [goodness, passion and ignorance], the whole world does not know Me who am above the modes and inexhaustible.

designed by DigitalWebdia

तात्पर्य

सारा संसार प्रकृति के तीन गुणों से मोहित है | जो लोग इस प्रकार से तीन गुणों के द्वारा मोहित हैं, वे नहीं जान सकते कि परमेश्वर कृष्ण इस प्रकृति से परे हैं | प्रत्येक जीव को प्रकृति के वशीभूत होकर एक विशेष प्रकार का शरीर मिलता है और तदानुसार उसे एक विशेष मनोवैज्ञानिक (मानसिक) तथा शारीरिक कार्य करना होता है | प्रकृति के तीन गुणों के अन्तर्गत कार्य करने वाले मनुष्यों की चार श्रेणियाँ हैं | जो नितान्त सतोगुणी हैं वे ब्राह्मण, जो रजोगुणी हैं वे क्षत्रिय और जो रजोगुणी एवं तमोगुणी दोनों हैं, वे वैश्य कहलाते हैं तथा जो नितान्त तमोगुणी हैं वे शुद्र कहलाते हैं | जो इनसे भी नीचे हैं वे पशु हैं | फिर ये उपाधियाँ स्थायी नहीं हैं | मैं ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या कुछ भी हो सकता हूँ | जो भी हो यह जीवन नश्वर है | यद्यपि यह जीवन नश्वर है और हम नहीं जान पाते कि अगले जीवन में हम क्या होंगे, किन्तु माया के वश में रहकर हम अपने आपको देहात्मबुद्धि के द्वारा अमरीकी, भारतीय, रुसी या ब्राह्मण, हिन्दू, मुसलमान आदि कहकर सोचते हैं | और यदि हम प्रकृति के गुणों में बँध जाते हैं तो हम उस भगवान् को भूल जाते हैं जो इन गुणों के मूल में है | अतः भगवान् का कहना है कि सारे जीव प्रकृति के इन गुणों द्वारा मोहित होकर यह नहीं समझ पाते कि इस संसार की पृष्ठभूमि में भगवान् हैं | जीव कई प्रकार के हैं – यथा मनुष्य, देवता, पशु आदि; और इनमें से हर एक प्रकृति के वश में है और ये सभी दिव्यपुरुष भगवान् को भूल चुके हैं | जो रजोगुणी तथा तमोगुणी हैं, यहाँ तक कि जो सतोगुणी भी हैं वे भी परमसत्य के निर्विशेष ब्रह्म स्वरूप से आगे नहीं बढ़ पाते | वे सब भगवान् के साक्षात् स्वरूप के समक्ष संभ्रमित हो जाते हैं, जिसमें सारा सौंदर्य, ऐश्वर्य, ज्ञान, बल, यश तथा त्याग भरा है | जब सतोगुणी तक इस स्वरूप को नहीं समझ पाते तो उनसे क्या आशा की जाये जो रजोगुणी या तमोगुणी हैं? कृष्णभावनामृत प्रकृति के तीनों गुणों से परे है और जो लोग निस्सन्देह कृष्णभावनामृत में स्थित हैं, वे ही वास्तव में मुक्त हैं |

14.

bhaktiprasad.in

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया |
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते || 7.14 ||

प्रकृति के तीन गुणों वाली इस मेरी दैवी शक्ति को पार कर पाना कठिन है | किन्तु जो मेरे शरणागत हो जाते हैं, वे सरलता से इसे पार कर जाते हैं |

This divine energy of Mine, consisting of the three modes of material nature, is difficult to overcome. But those who have surrendered unto Me can easily cross beyond it.

designed by
DigitalWebdia

तात्पर्य

भगवान् की शक्तियाँ अनन्त हैं और ये सारी शक्तियाँ दैवी हैं | यद्यपि जीवात्माएँ उनकी शक्तियों के अंश हैं, अतः दैवी हैं, किन्तु भौतिक शक्ति के सम्पर्क में रहने से उनकी परा शक्ति आच्छादित रहती है | इस प्रकार भौतिक शक्ति से आच्छादित होने के कारण मनुष्य उसके प्रभाव का अतिक्रमण नहीं कर पाता | जैसा कि पहले कहा जा चुका है परा तथा अपरा शक्तियाँ भगवान् से उद्भूत होने के करण नित्य हैं | जीव भगवान् की परा शक्ति से सम्बन्धित होते हैं, किन्तु अपरा शक्ति अर्थात् पदार्थ के द्वारा दूषित होने से उनका मोह भी नित्य होता है |अतः बद्धजीव नित्यबद्ध है | कोई भी उसके बद्ध होने की तीथि को नहीं बता सकता | फलस्वरूप प्रकृति के चंगुल से उसका छूट पाना अत्यन्त कठिन है, भले ही प्रकृति अपराशक्ति क्यों न हो क्योंकि भौतिक शक्ति परमेच्छा द्वारा संचालित होती है. जिसे लाँघ पाना जीव के लिए कठिन है | यहाँ पर अपरा भौतिक प्रकृति को दैवीप्रकृति कहा गया है क्योंकि इसका सम्बन्ध दैवी है तथा इसका चालन दैवी इच्छा से होता है | दैवी इच्छा से संचालित होने के कारण भौतिक प्रकृति अपर होते हुए भी दृश्यजगत् के निर्माण तथा विनाश में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है | वेदों में इसकी पुष्टि इस प्रकार हुई है – मायां तु प्रकृतिं विद्यान्मायिनं तु महेश्वरम्– यद्यपि माया मिथ्या या नश्वर है, किन्तु माया की पृष्ठभूमि में परम जादूगर भगवान् हैं, जो परम नियन्ता महेश्वर हैं (श्वेताश्वतर उपनिषद् ४.१०) |

तात्पर्य

गुण का दूसरा अर्थ रस्सी (रज्जु) है | इससे यह समझना चाहिए कि बद्धजीव मोह रूपी रस्सी से जकड़ा हुआ है | यदि मनुष्य के हाथ-पैर बाँध दिये जायें तो वह अपने को छुड़ा नहीं सकता – उसकी सहायता के लिए कोई ऐसा व्यक्ति चाहिए जो बँधा न हो | चूँकि एक बँधा हुआ व्यक्ति दूसरे बँधे व्यक्ति की सहायता नहीं कर सकता, अतः रक्षक को मुक्त होना चाहिए | अतः केवल कृष्ण या उनके प्रामाणिक प्रतिनिधि गुरु ही बद्धजीव को छुड़ा सकते हैं | बिना ऐसी उत्कृष्ट सहायता के भवबन्धन से छुटकारा नहीं मिल सकता | भक्ति या कृष्णभावनामृत इस प्रकार के छुटकारे में सहायक हो सकता है | कृष्ण माया के अधीश्वर होने के नाते इस दुर्लंघ्य शक्ति को आदेश दे सकते हैं कि बद्धजीव को छोड़ दे | वे शरणागत जीव पर अहैतुकी कृपा या वात्सल्यवश ही जीव को मुक्त किये जाने का आदेश देते हैं, क्योंकि जीव मूलतः भगवान् का प्रिय पुत्र है | अतः निष्ठुर माया के बंधन से मुक्त होने का एकमात्र साधन है, भगवान् के चरणकमलों की शरण ग्रहण करना | मामेव पद भी अत्यन्त सार्थक है | माम् का अर्थ है एकमात्र कृष्ण (विष्णु) को, ब्रह्म या शिव को नहीं | यद्यपि ब्रह्मा तथा शिव अत्यन्त महान हैं और प्रायः विष्णु के ही समान हैं, किन्तु ऐसे रजोगुण तथा तमोगुण के अवतारों के लिए सम्भव नहीं कि वे बद्धजीव को माया के चंगुल से छुड़ा सके | दूसरे शब्दों में, ब्रह्मा तथा शिव दोनों ही माया के वश में रहते हैं | केवल विष्णु माया के स्वामी हैं, अतः वे ही बद्धजीव को मुक्त कर सकते हैं | वेदों में (श्वेताश्वतर उपनिषद् ३.८) इसकी पुष्टि तमेव विदित्वा के द्वारा हुई है जिसका अर्थ है, कृष्ण को जान लेने पर ही मुक्ति सम्भव है | शिवजी भी पुष्टि करते हैं कि केवल विष्णु-कृपा से मुक्ति प्राप्त की जा सकती है – मुक्तिप्रदाता सर्वेषां विष्णुरेव न संशयः– अर्थात् इसमें सन्देह नहीं कि विष्णु ही सबों के मुक्तिदाता हैं |

15.

bhaktiprasad.in

न मां दुष्कृतिनो मूढाः प्रपद्यन्ते नराधमाः |
माययापहृतज्ञाना आसुरं भावमाश्रिताः || 7.15 ||

जो निपट मुर्ख है, जो मनुष्यों में अधम हैं, जिनका ज्ञान माया द्वारा हर लिया गया है तथा जो असुरों की नास्तिक प्रकृति को धारण करने वाले हैं, ऐसे दुष्ट मेरी शरण ग्रहण नहीं करते |

Those miscreants who are grossly foolish, lowest among mankind, whose knowledge is stolen by illusion, and who partake of the atheistic nature of demons, do not surrender unto Me.

designed by
DigitalWebdia

तात्पर्य

भगवद्गीता में यह कहा गया है कि श्रीभगवान् के चरणकमलों की शरण ग्रहण करने से मनुष्य प्रकृति के कठोर नियमों को लाँघ सकता है | यहाँ पर यह प्रश्न उठता है कि फिर विद्वान दार्शनिक, वैज्ञानिक, व्यापारी, शासक तथा जनता के नेता सर्वशक्तिमान भगवान् श्रीकृष्ण के चरणकमलों की शरण क्यों नहीं ग्रहण करते? बड़े-बड़े जननेता विभिन्न विधियों से विभिन्न योजनाएँ बनाकर अत्यन्त धैर्यपूर्वक जन्म-जन्मान्तर तक प्रकृति के नियमों से मुक्ति की खोज करते हैं | किन्तु यदि वही मुक्ति भगवान् के चरणकमलों की शरण ग्रहण करने मात्र से सम्भव हो तो ये बुद्धिमान तथा श्रमशील मनुष्य इस सरल विधि को क्यों नहीं अपनाते? गीता इसका उत्तर अत्यन्त स्पष्ट शब्दों में देती है | समाज के वास्तविक विद्वान नेता यथा ब्रह्मा, शिव, कपिल, कुमारगण, मनु, व्यास, देवल, असित, जनक, प्रह्लाद, बलि तथा उनके पश्चात् माध्वाचार्य, रामानुजाचार्य, श्रीचैतन्य तथा बहुत से अन्य श्रद्धावान दार्शनिक, राजनीतिज्ञ, शिक्षक, विज्ञानी आदि हैं जो सर्वशक्तिमान परमपुरुष के चरणों में शरण लेते हैं | किन्तु जो लोग वास्तविक दार्शनिक, विज्ञानी, शिक्षक, प्रशासक आदि नहीं हैं, किन्तु भौतिक लाभ के लिए ऐसा बनते हैं, वे परमेश्वर की योजना या पथ को स्वीकार नहीं करते | उन्हें ईश्वर का कोई ज्ञान नहीं होता; वे अपनी सांसारिक योजनाएँ बनाते हैं और संसार की समस्याओं को हल करने के लिए अपने व्यर्थ प्रयासों के द्वारा स्थिति को और जटिल बना लेते हैं | चूँकि भौतिक शक्ति इतनी बलवती है, इसीलिए वह नास्तिकों की अवैध योजनाओं का प्रतिरोध करती है और योजना आयोगों के ज्ञान को ध्वस्त कर देती है | नास्तिक योजना-निर्माताओं को यहाँ दुष्कृतिनः कहा गया है जिसका अर्थ है, दुष्टजन | कृती का अर्थ पुण्यात्मा होताहै | नास्तिक योजना-निर्माता कभी-कभी अत्यन्त बुद्धिमान और प्रतिभाशाली होता है, क्योंकि किसी भी विराट योजना के लिए, चाहे वह अच्छी हो या बुरी, बुद्धि की आवश्यकता होती है | लेकिन नास्तिक की बुद्धि का प्रयोग परमेश्वर की योजना का विरोध करने में होता है, इसीलिए नास्तिक योजना-निर्माता दुष्कृती कहलाता है, जिससे सूचित होता है की उसकी बुद्धि तथा प्रयास उलटी दिशा की ओर होते हैं |

तात्पर्य

गीता में यह स्पष्ट कहा गया है कि भौतिक शक्ति परमेश्वर के पूर्ण निर्देशन में कार्य करती है | उसका कोई स्वतन्त्र प्रभुत्व नहीं है | जिस प्रकार छाया पदार्थ का अनुसरण करती है, उसी प्रकार यह शक्ति भी कार्य करती है | तो भी यह भौतिक शक्ति अत्यन्त प्रबल है और नास्तिक अपने अनीश्वरवादी स्वभाव के कारण यह नहीं जान सकता कि वह किस तरह कार्य करती है, न ही वह परमेश्वर की योजना को जान सकता है | मोह तथा रजो एवं तमो गुणों में रहकर उसकी सारी योजनाएँ उसी प्रकार ध्वस्त हो जाती है, जिस प्रकार भौतिक दृष्टि से विद्वान्, वैज्ञानिक, दार्शनिक, शासक तथा शिक्षक होते हुए भी हिरण्यकशिपु तथा रावण की सारी योजनाएँ ध्वस्त हो गई थीं | ये दुष्कृति या दुष्ट चार प्रकार के होते हैं जिनका वर्णन नीचे दिया जाता है – (१)मूढ़– वे जो कठिन श्रम करने वाले भारवाही पशुओं की भाँति निपट मूर्ख होते हैं | वे अपने श्रम का लाभ स्वयं उठाना चाहते हैं, अतः वे भगवान् को उसे अर्पित करना नहीं चाहते | भारवाही पशु का उपयुक्त उदाहरण गधा है | इस पशु से उसका स्वामी अत्यधिक कार्य लेता है | गधा यह नहीं जानता कि वह अहर्निश किसके लिए काम करता है | वह घास से पेट भर कर संतुष्ट रहता है, अपने स्वामी से मार खाने के भय से केवल कुछ घंटे सोता है और गधी से बार-बार लात खाने के भय के बावजूद भी अपनी कामतृप्ति पूरी करता है | कभी-कभी गधा कविता करता है और दर्शन बघारता है, किन्तु उसके रेंकने से लोगों की शान्ति भंग होती है | ऐसी ही दशा उन सकाम-कर्मियों की है जो यह नहीं जानते कि वे किसके लिए कर्म करते हैं | वे यह नहीं जानते कि कर्म यज्ञ के लिए है | ऐसे लोग जो अपने द्वारा उत्पन्न कर्मों के भार से दबे रहते हैं प्रायः यह कहते सुने जाते हैं कि उनके पास अवकाश कहाँ कि वे जीव की अमरता के विषय में सुनें | ऐसे मूढों के लिए नश्वर भौतिक लाभ ही जीवन का सब कुछ होता है भले ही वे अपने श्रम फल के एक अंश का ही उपभोग कर सकें | कभी-कभी वे लाभ के लिए रातदिन नहीं सोते, भले ही उनके आमाशय में व्रण हो जाय या अपच हो जाय, वे बिना खाये ही संतुष्ट रहते हैं, वे मायामय स्वामियों के लाभ हेतु अहर्निश काम में व्यस्त रहते हैं |

तात्पर्य

अपने असली स्वामी से अनभिज्ञ रहकर ये मुर्ख कर्मी माया की सेवा में व्यर्थ ही अपना समय गँवाते हैं | दुर्भाग्य तो यह है कि वे कभी भी स्वामियों के परम स्वामी की शरण में नहीं जाते, न ही वे सही व्यक्ति से उसके विषय में सुनने में कोई समय लगाते हैं | जो सूकर विष्ठा खाता है वह चीनी तथा घी से बनी मिठाइयों की परवाह नहीं करता | उसी प्रकार मुर्ख कर्मी इस नश्वर जगत् की इन्द्रियों को सुख देने वाले समाचारों को निरन्तर सुनता रहता है, किन्तु संसार को गतिशील बनाने वाली शाश्वत जीवित शक्ति (प्राण) के विषय में सुनने में तनिक भी समय नहीं लगाता | (२) दूसरे प्रकार के दुष्कृती नराधम अर्थात् अधम व्यक्ति कहलाता है | नर का अर्थ है मनुष्य, मनुष्य और अधम का अर्थ है, सब से नीच | चौरासी लाख जीव योनियों में से चार लाख मानव योनियाँ हैं | इनमें से अनेक निम्न मानव योनियाँ हैं, जिनमें से अधिकांश असंस्कृत हैं | सभ्य मानव योनियाँ वे हैं जिनके पास सामाजिक, राजनीतिक तथा धार्मिक नियम हैं | जो मनुष्य सामाजिक तथा राजनीतिक दृष्टि से उन्नत हैं, किन्तु जिनका कोई धर्म नहीं होता वे नराधम माने जाते हैं | धर्म ईश्वरविहीन नहीं होता क्योंकि धर्म का प्रयोजन परमसत्य को तथा उसके साथ मनुष्य के सम्बन्ध को जानना है | गीता में भगवान् स्पष्टतः कहते हैं कि उनसे परे कोई भी नहीं और वे ही परमसत्य हैं | मनुष्य-जीवन का सुसंस्कृत रूप सर्वशक्तिमान परमसत्य श्रीभगवान् कृष्ण के साथ मनुष्य की विस्मृतभावना को जागृत करने के लिए मिला है | जो इस सुअवसर को हाथ से जाने देता है वही नराधम है | शास्त्रों से पता चलता है कि जब बालक माँ के गर्भ में अत्यन्त असहाय रहता है, तो वह अपने उद्धार के लिए प्रार्थना करता है और वचन देता है कि गर्भ से बाहर आते ही वह केवल भगवान् की पूजा करेगा | संकट के समय ईश्वर का स्मरण प्रत्येक जीव का स्वभाव है, क्योंकि वह ईश्वर के साथ सदा से सम्बन्धित रहता है | किन्तु उद्धार के बाद बालक जन्म-पीड़ा को ओर उसी के साथ अपने उद्धारक को भी भूल जाता है, क्योंकि वह माया के वशीभूत हो जाता है | यह तो बालकों के अभिभावकों का कर्तव्य है कि वे उनमें सुप्त दिव्य भावनामृत को जागृत करें | वर्णाश्रम पद्धति में मनुस्मृति के अनुसार ईशभावनामृत को जागृत करने के उद्देश्य से दस शुद्धि-संस्कारों का विधान है, जो धर्म का पथ-प्रदर्शन करते हैं |

तात्पर्य

किन्तु अब विश्व के किसी भाग में किसी भी विधि का दृढ़तापूर्वक पालन नहीं होता और फलस्वरूप ९९.९% जनसंख्या नराधम है | जब सारी जनसंख्या नराधम हो जाती है तो स्वाभाविक है कि उनकी सारी तथाकथित शिक्षा भौतिक प्रकृति की सर्वसमर्थ शक्ति द्वारा व्यर्थ कर दी जाती है | गीता के अनुसार विद्वान पुरुष वही है जो एक ब्राह्मण, कुत्ता, गाय, हाथी तथा चंडाल को समान दृष्टि से देखता है | असली भक्त की भी ऐसी ही दृष्टि होती है | गुरु रूप ईश्वर के अवतार श्रीनित्यानन्द प्रभु ने दो भाइयों जगाई तथा माधाई नामक विशिष्ट नराधमों का उद्धार किया और यह दिखला दिया कि किस प्रकार शुद्ध भक्त नराधमों पर दया करता है | अतः जो नराधम भगवान् द्वारा बहिष्कृत किया जाता है, वह केवल भक्त की अनुकम्पा से पुनः अपना अध्यात्मिक भावनामृत कर सकता है | श्रीचैतन्य महाप्रभु ने भागवत-धर्म का प्रवर्तन करते हुए संस्तुति की है कि लोग विनीत भाव से भगवान् के सन्देश को सुनें | इस सन्देश का सार भगवद्गीता है | विनीत भाव से श्रवण करने मात्र से अधम से अधम मनुष्यों का उद्धार हो सकता है, किन्तु दुर्भाग्यवश वे इस सन्देश को सुनना तक नहीं चाहते – परमेश्वर की इच्छा के प्रति समर्पण करना तो दूर रहा| ये नराधम मनुष्य के प्रधान कर्तव्य की डटकर अपेक्षा करते हैं | (३) दुष्कृतियों की तीसरी श्रेणी माययापहृतज्ञानाः की है अर्थात् ऐसे व्यक्तियों की जिनका प्रकाण्ड ज्ञान माया के प्रभाव से शून्य हो चुका है | ये अधिकांशतः बुद्धिमान व्यक्ति होते हैं – यथा महान दार्शनिक, कवि, साहित्यकार, वैज्ञानिक आदि, किन्तु माया इन्हें भ्रान्त कर देती है, जिसके कारण ये परमेश्वर की अवज्ञा करते हैं | इस समय माययापहृतज्ञानाः की बहुत बड़ी संख्या है, यहाँ तक कि वे भगवद्गीता के विद्वानों के मध्य भी हैं | गीता में अत्यन्त सीधी सरल भाषा में कहा गया है कि श्रीकृष्ण ही भगवान् हैं | न तो कोई उनके तुल्य है, न ही उनसे बड़ा | वे समस्त मनुष्यों के आदि पिता ब्रह्मा के भी पिता बताये गये हैं | वास्तव में वे ब्रह्मा के ही नहीं, अपितु समस्त जीवयोनियों के भी पिता हैं |

तात्पर्य

वे निराकार ब्रह्म तथा परमात्मा के मूल हैं और जीवात्मा में स्थित परमात्मा उनका अंश है | वे सबके उत्स हैं और सबों को सलाह दी जाती है कि उनके चरणकमलों के शरणागत बनें | इन सब कथनों के बावजूद ये माययापहृतज्ञानाः भगवान् का उपहास करते हैं और उन्हें सामान्य मनुष्य मानते हैं | वे यह नहीं जानते कि भाग्यशाली मानव जीवन श्रीभगवान् के दिव्य शाश्वत स्वरूप के अनुरूप ही रचा गया है | गीता की ऐसी सारी अवैध व्याख्याएँ जो माययापहृतज्ञानाः वर्ग के लोगों द्वारा की गई हैं और परम्परा पद्धति से हटकर हैं, अध्यात्मिक जानकारी के पथ में रोड़े का कार्य करती हैं | मायाग्रस्त व्याख्याकार न तो स्वयं भगवान् कृष्ण के चरणों की शरण में जाते हैं और नअन्यों को इस सिद्धान्त का पालन करने के लिए शिक्षा देते हैं | (४) दुष्कृतियों की चौथी श्रेणी आसुरं भावमाश्रिताः अर्थात् आसुरी सिद्धान्त वालों की है | यह श्रेणी खुले रूप से नास्तिक होती है | इनमें से कुछ तर्क करते हैं कि परमेश्वर कभी भी इस संसार में अवतरित नहीं हो सकता, किन्तु वे इसका कोई ठोस प्रमाण नहीं बता पाते कि ऐसा क्यों नहीं हो सकता | कुछ ऐसे हैं जो परेमश्वर को निर्विशेष रूप के अधीन मानते हैं, यद्यपि गीता में इसका उल्टा बताया गया है | नास्तिक श्रीभगवान् के द्वेषवश अपनी बुद्धि से कल्पित अनेक अवैध अवतारों को प्रस्तुत करते हैं | ऐसे लोग जिनके जीवन का एकमात्र उद्देश्य भगवान् को नकारना है, श्रीकृष्ण के चरणकमलों के कभी शरणागत नहीं हो सकते | दक्षिण भारत के श्रीयामुनाचार्य अल्बन्दरू ने कहा है "हे प्रभु! आप उन लोगों द्वारा नहीं जाने जाते जो नास्तिक सिद्धान्तों में लगे हैं, भले ही आप विलक्षण गुण, रूप तथा लीला से युक्त हैं, सभी शास्त्रों ने आपका विशुद्ध सत्त्वमय विग्रह प्रमाणित किया है तथा दैवी गुणसम्पन्न दिव्यज्ञान के आचार्य भी आपको मानते हैं |" अतएव (१) मूढ़ (२) नराधम (३) माययापहृतज्ञानी अर्थात् भ्रमित मनोधर्मी, तथा (४) नास्तिक – ये चार प्रकार के दुष्कृती कभी भी भगवान् के चरणकमलों की शरण में नहीं जाते, भले ही सारे शास्त्र तथा आचार्य ऐसा उपदेश क्यों न देते रहें |

16.

bhaktiprasad.in

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन |
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ || 7.16 ||

हे भरतश्रेष्ठ ! चार प्रकार के पुण्यात्मा मेरी सेवा करते हैं – आर्त, जिज्ञासु, अर्थार्थी तथा ज्ञानी |

O best among the Bhāratas [Arjuna], four kinds of pious men render devotional service unto Me-the distressed, the desirer of wealth, the inquisitive, and he who is searching for knowledge of the Absolute.

designed by
DigitalWebdia

तात्पर्य

दुष्कृती के सर्वथा विपरीत ऐसे लोग हैं जो शास्त्रीय विधि-विधानों का दृढ़ता से पालन करते हैं और ये सुकृतिनः कहलाते हैं अर्थात् ये वे लोग हैं जो शास्त्रीय विधि-विधानों, नैतिक तथा सामाजिक नियमों को मानते हैं और परमेश्वर के प्रति न्यूनाधिक भक्ति करते हैं | इस लोगों की चार श्रेणियाँ हैं – वे जो पीड़ित हैं, वे जिन्हें धन की आवश्यकता है, वे जिन्हें जिज्ञासा है और वे जिन्हें परमसत्य का ज्ञान है | ये सारे लोग विभिन्न परिस्थितियों में परमेश्वर की भक्ति करते रहते हैं | ये शुद्ध भक्त नहीं हैं, क्योंकि ये भक्ति के बदले कुछ महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति करना चाहते हैं | शुद्ध भक्ति निष्काम होती है और उसमें किसी लाभ की आकांशा नहीं रहती | भक्तिरसामृत सिन्धु में (१.१.११) शुद्ध भक्ति की परिभाषा इस प्रकार की गई है – अन्याभिलाषिताशून्यं ज्ञानकर्माद्यनावृतम् | आनुकूल्येन कृष्णानुशीलनं भक्तिरुत्तमा || "मनुष्य को चाहिए कि परमेश्वर कृष्ण की दिव्य प्रेमाभक्ति किसी सकामकर्म अथवा मनोधर्म द्वारा भौतिक लाभ की इच्छा से रहित होकर करे | यह शुद्धभक्ति कहलाती है |" जब ये चार प्रकार के लोग परमेश्वर के पास भक्ति के लिए आते हैं और शुद्ध भक्त की संगती से पूर्णतया शुद्ध हो जाते हैं, तो ये भी शुद्ध भक्त हो जाते हैं | जहाँ तक दुष्टों (दुष्कृतियों) का प्रश्न है उनके लिए भक्ति दुर्गम है क्योंकि उनका जीवन स्वार्थपूर्ण, अनियमित तथा निरुद्देश्य होता है | किन्तु इनमें से भी कुछ लोग शुद्ध भक्त के सम्पर्क में आने पर शुद्ध भक्त बन जाते हैं | जो लोग सदैव सकाम कर्मों में व्यस्त रहते हैं, वे संकट के समय भगवान् के पास आते हैं और तब वे शुद्धभक्तों की संगति करते हैं तथा विपत्ति में भगवान् के भक्त बन जाते हैं | जो बिलकुल हताश हैं वे भी कभी-कभी शुद्ध भक्तों की संगति करने आते हैं और ईश्वर के विषय में जानने की जिज्ञासा करते हैं | इसी प्रकार शुष्क चिन्तक जब ज्ञान के प्रत्येक क्षेत्र से हताश हो जाते हैं तो वे कभी-कभी ईश्वर को जानना चाहते हैं और वे भगवान् की भक्ति करने आते हैं | इस प्रकार ये निराकार ब्रह्म तथा अन्तर्यामी परमात्मा के ज्ञान को पार कर जाते हैं और भगवत्कृपा से या उनके शुद्ध भक्त की कृपा से उन्हें साकार भगवान् का बोध हो जाता है | कुल मिलाकर जब आर्त, जिज्ञासु, ज्ञानी तथा धन की इच्छा रखने वाले समस्त भौतिक इच्छाओं से मुक्त हो जाते हैं और जब वे यह भलीभाँति समझ जाते हैं कि भौतिक आसक्ति से आध्यात्मिक उन्नति का कोई सरोकार नहीं है, तो वे शुद्धभक्त बन जाते हैं | जब तक ऐसी शुद्ध अवस्था प्राप्त नहीं हो लेती, तब तक भगवान् की दिव्यसेवा में लगे भक्त सकाम कर्मों में या संसारी ज्ञान की खोज में अनुरक्त रहते हैं | अतः शुद्ध भक्ति की अवस्था तक पहुँचने के लिए मनुष्य को इन सबों को लाँघना होता है |

17.

bhaktiprasad.in

तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते |
प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मम प्रियः || 7.17 ||

इनमें से जो परमज्ञानी है और शुद्धभक्ति में लगा रहता है वह सर्वश्रेष्ठ है, क्योंकि मैं उसे अत्यन्त प्रिय हूँ और वह मुझे प्रिय है |

Of these, the wise one who is in full knowledge in union with Me through pure devotional service is the best. For I am very dear to him, and he is dear to Me.

designed by
DigitalWebdia

तात्पर्य

भौतिक इच्छाओं के समस्त कल्मष से मुक्त आर्त, जिज्ञासु, धनहीन तथा ज्ञानी ये सब शुद्धभक्त बन सकते हैं | किन्तु इनमें से जो परमसत्य का ज्ञानी है और भौतिक इच्छाओं से मुक्त होता है वही भगवान् का शुद्धभक्त हो पता है | इन चार वर्गों में से जो भक्त ज्ञानी है और साथ ही भक्ति में लगा रहता है, वह भगवान् के कथनानुसार सर्वश्रेष्ठ है | ज्ञान की खोज करते रहने से मनुष्य को अनुभूति होती है कि उसका आत्मा उसके भौतिक शरीर से भिन्न है | अधिक उन्नति करने पर उसे निर्विशेष ब्रह्म तथा परमात्मा का ज्ञान होता है | जब वह पूर्णतया शुद्ध हो जाता है तो उसे ईश्वर के नित्य दास के रूप में अपनी स्वाभाविक स्थिति की अनुभूति होती है | इस प्रकार शुद्ध भक्त की संगति में आर्त, जिज्ञासु, धन का इच्छुक तथा ज्ञानी स्वयं शुद्ध हो जाते हैं | किन्तु प्रारम्भिक अवस्था में जिस व्यक्ति को परमेश्वर का पूर्णज्ञान होता है और साथ ही जो उनकी भक्ति करता रहता है, वह व्यक्ति भगवान् को अत्यन्त प्रिय होता है | जिसे भगवान् की दिव्यता का शुद्ध ज्ञान प्राप्तहोता है, वह भक्ति द्वारा इस तरह सुरक्षित रहता है कि भौतिक कल्मष उसे छू भी नहीं पाते |

18.

bhaktiprasad.in

उदाराः सर्व एवैते ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम् |
आस्थितः स हि युक्तात्मा मामेवानुत्तमां गतिम् || 7.18 ||

निस्सन्देह ये सब उदारचेता व्यक्ति हैं, किन्तु जो मेरे ज्ञान को प्राप्त है, उसे मैं अपने ही समान मानता हूँ | वह मेरी दिव्यसेवा में तत्पर रहकर मुझ सर्वोच्च उद्देश्य को निश्चित रूप से प्राप्त

All these devotees are undoubtedly magnanimous souls, but he who is situated in knowledge of Me I consider verily to dwell in Me. Being engaged in My transcendental service, he attains Me.

designed by DigitalWebdia

तात्पर्य

ऐसा नहीं है कि जो कम ज्ञानी भक्त है वे भगवान् को प्रिय नहीं हैं | भगवान् कहते हैं कि सभी उदारचेता हैं क्योंकि चाहे जो भी भगवान् के पास किसी भी उद्देश्य से आये वह महात्मा कहलाता है | जो भक्त भक्ति के बदले कुछ लाभ चाहते हैं उन्हें भगवान् स्वीकार करते हैं क्योंकि इससे स्नेह का विनिमय होता है | वे स्नेहवश भगवान् से लाभ की याचना करते हैं और जब उन्हें वह प्राप्त हो जाता है तो वे इतने प्रसन्न होते हैं कि वे भगवद्भक्ति करने लगते हैं | किन्तु ज्ञानी भक्त भगवान् को इसलिए प्रिय है कि उसका उद्देश्य प्रेम तथा भक्ति से परमेश्वर की सेवा करना होता है | ऐसा भक्त भगवान् की सेवा किये बिना क्षण भर भी नहीं रह सकता | इसी प्रकार परमेश्वर अपने भक्त को बहुत चाहते हैं और वे उससे विलग नहीं हो पाते | *श्रीमद्भागवत में (९.४.६८) भगवान् कहते हैं-साधवो हृदयं मह्यं साधूनां हृदयं त्वहम् | मदन्यत्ते न जानन्ति नाहं तेभ्यो मनागपि* || "भक्तगण सदैव मेरे हृदय में वास करते हैं और मैं भक्तों के हृदयों में वास करता हूँ | भक्त मेरे अतिरिक्त और कुछ नहीं जानता और मैं भी भक्त को कभी नहीं भूलता | मेरे तथा शुद्ध भक्तों के बीच घनिष्ट सम्बन्ध रहता है | ज्ञानी शुद्धभक्त कभी भी अध्यात्मिक सम्पर्क से दूर नहीं होते, अतः वे मुझे अत्यन्त प्रिय हैं |"

19.

bhaktiprasad.in

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते |
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः || 7.19 ||

अनेक जन्म-जन्मान्तर के बाद जिसे सचमुच ज्ञान होता है, वह मुझको समस्त कारणों का कारण जानकर मेरी शरण में आता है | ऐसा महात्मा अत्यन्त दुर्लभ होता है |

After many births and deaths, he who is actually in knowledge surrenders unto Me, knowing Me to be the cause of all causes and all that is. Such a great soul is very rare.

designed by
DigitalWebdia

तात्पर्य

भक्ति या दिव्य अनुष्ठानों को करता हुआ जीव अनेक जन्मों के पश्चात् इस दिव्यज्ञान को प्राप्त कर सकता है कि आत्म-साक्षात्कार का चरम लक्ष्य श्रीभगवान् हैं | आत्म-साक्षात्कार के प्रारम्भ में जब मनुष्य भौतिकता का परित्याग करने का प्रयत्न करता है तब निर्विशेषवाद की ओर उसका झुकाव हो सकता है, किन्तु आगे बढ़ने पर वह यह समझ पता है कि आध्यात्मिक जीवन में भी कार्य हैं और इन्हीं से भक्ति का विधान होता है | इसकी अनुभूति होने पर वह भगवान् के प्रति आसक्त हो जाता है और उनकी शरण ग्रहण कर लेता है | इस अवसर पर वह समझ सकता है कि श्रीकृष्ण की कृपा ही सर्वस्व है, वे ही सब कारणों के कारण हैं और यह जगत् उनसे स्वतन्त्र नहीं है | वह इस भौतिक जगत् को अध्यात्मिक विविधताओं का विकृत प्रतिबिम्ब मानता है और अनुभव करता है कि प्रत्येक वस्तु का परमेश्वर कृष्ण से सम्बन्ध है | इस प्रकार वह प्रत्येक वस्तु को वासुदेव श्रीकृष्ण से सम्बन्धित समझता है | इस प्रकार की वासुदेवमयी व्यापक दृष्टि होने पर भगवान् कृष्ण को परमलक्ष्य मानकर शरणागति प्राप्त होती है | ऐसे शरणागत महात्मा दुर्लभ हैं | इस श्लोक की सुन्दर व्याख्या श्वेताश्वतर उपनिषद् में (३.१४-१५) मिलती है – सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् | स भूमिं विश्वतो वृत्वात्यातिष्ठद् दशांगुलम् || पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यम् | उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति || छान्दोग्य उपनिषद् (५.१.१५) में कहा गया है – न वै वाचो न चक्षूंषि न श्रोत्राणि न मनांसीत्याचक्षते प्राण इति एवाचक्षते ह्येवैतानि सर्वाणि भवन्ति – जीव के शरीर की बोलने की शक्ति, देखने की शक्ति, सुनने की शक्ति, सोचने की शक्ति ही प्रधान नहीं है |समस्त कार्यों का केन्द्रबिन्दु तो वह जीवन (प्राण) है | इसी प्रकार भगवान् वासुदेव या भगवान् श्रीकृष्ण ही समस्त पदार्थों में मूल सत्ता हैं | इस देह में बोलने, देखने, सुनने तथा सोचने आदि की शक्तियाँ हैं, किन्तु यदि वे भगवान् से सम्बन्धित न हों तो सभी व्यर्थ हैं | वासुदेव सर्वव्यापी हैं और प्रत्येक वस्तु वासुदेव है | अतः भक्त पूर्ण ज्ञान में रहकर शरण ग्रहण करता है (तुलनार्थ भगवद्गीता ७.१७ तथा ११.४०) |

20.

bhaktiprasad.in

कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्यदेवताः |
तं तं नियममास्थाय प्रकृत्या नियताः स्वया || 7.20 ||

जिनकी बुद्धि भौतिक इच्छाओं द्वारा मारी गई है, वे देवताओं की शरण में जाते हैं और वे अपने-अपने स्वभाव के अनुसार पूजा विशेष विधि-विधानों का पालन करते हैं |

Those whose minds are distorted by material desires surrender unto demigods and follow the particular rules and regulations of worship according to their own natures.

designed by DigitalWebdia

तात्पर्य

जो समस्त भौतिक कल्मष से मुक्त हो चुके हैं, वे भगवान् की शरण ग्रहण करते हैं और उनकी भक्ति में तत्पर होते हैं | जब तक भौतिक कल्मष धुल नहीं जाता, तब तक वे स्वभावतः अभक्त रहते हैं | किन्तु जो भौतिक इच्छाओं के होते हुए भी भगवान् की ओर उन्मुख होते हैं, वे बहिरंगा द्वारा आकृष्ट नहीं होते |चूँकि वे सही उद्देश्य की ओर अग्रसर होते हैं, अतः वे शीघ्र ही सारी भौतिक कामेच्छाओं से मुक्त हो जाते हैं | श्रीमद्भागवत में कहा गया है कि मनुष्य को चाहिए कि स्वयं को वासुदेव के प्रति समर्पित करे और उनकी पूजा करे, चाहे वह भौतिक इच्छाओं से रहित हो या भौतिक इच्छाओं से पूरित हो या भौतिक कल्मष से मुक्ति चाहता हो | जैसा कि भागवत में (२.३.१०) कहा गया है – *अकामः सर्वकामो वा मोक्षकाम उदारधीः | तीव्रेण भक्तियोगेन यजेत पुरुषं परम्* || जो अल्पज्ञ हैं और जिन्होंने अपनी आध्यात्मिक चेतना खो दी है, वे भौतिक इच्छाओं की अविलम्ब पूर्ति के लिए देवताओं की शरण में जाते हैं | सामान्यतः ऐसे लोग भगवान् की शरण में नहीं जाते क्योंकि वे निम्नतर गुणों वाले (रजो तथा तमोगुणी) होते हैं, अतः वे विभिन्न देवताओं की पूजा करते हैं | वे पूजा के विधि-विधानों का पालन करने में ही प्रसन्न रहते हैं | देवताओं के पूजक छोटी-छोटी इच्छाओं के द्वारा प्रेरित होते हैं और यह नहीं जानते कि परमलक्ष्य तक किस प्रकार पहुँचा जाय | किन्तु भगवद्भक्त कभी भी पथभ्रष्ट नहीं होता | चूँकि वैदिक साहित्य में विभिन्न उद्देश्यों के लिए भिन्न-भिन्न देवताओं के पूजन का विधान है, अतः जो भगवद्भक्त नहीं है वे सोचते हैं कि देवता कुछ कार्यों के लिए भगवान् से श्रेष्ठ हैं | किन्तु शुद्धभक्त जानता है कि भगवान् कृष्ण ही सबके स्वामी हैं | चैतन्यचरितामृत में (आदि ५.१४२) कहा गया है – एकले ईश्वर कृष्ण, आर सब भृत्य – केवल भगवान् कृष्ण ही स्वामी हैं और अन्य सब दास हैं | फलतः शुद्धभक्त कभी भी अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए देवताओं के निकट नहीं जाता | वह तो परमेश्वर पर निर्भर रहता है और वे जो कुछ देते हैं, उसी में संतुष्ट रहता है |

21.

bhaktiprasad.in

यो यो यां यां तनुं भक्तः श्रद्धयार्चितुमिच्छति |
तस्य तस्याचलां श्रद्धां तामेव विदधाम्यहम् || 7.21 ||

मैं प्रत्येक जीव के हृदय में परमात्मा स्वरूप स्थित हूँ | जैसे ही कोई किसी देवता की पूजा करने की इच्छा करता है, मैं उसकी श्रद्धा को स्थिर करता हूँ, जिससे वह उसी विशेष देवता की

I am in everyone's heart as the Supersoul. As soon as one desires to worship the demigods, I make his faith steady so that he can devote himself to some particular deity.

designed by DigitalWebdia

तात्पर्य

ईश्वर ने हर एक को स्वतन्त्रता प्रदान की है, अतः यदि कोई पुरुष भौतिक भोग करने का इच्छुक है और इसके लिए देवताओं से सुविधाएँ चाहता है तो प्रत्येक हृदय में परमात्मा स्वरूप स्थित भगवान् उसके मनोभावों को जानकर ऐसी सुविधाएँ प्रदान करते हैं | समस्त जीवों के परम पिता के रूप में वे उनकी स्वतन्त्रता में हस्तक्षेप नहीं करते, अपितु उन्हें सुविधाएँ प्रदान करते हैं, जिससे वे अपनी भौतिक इच्छाएँ पूरी कर सकें | कुछ लोग यह प्रश्न कर सकते हैं कि सर्वशक्तिमान ईश्वर जीवों को ऐसी सुविधाएँ प्रदान करके उन्हें माया के पाश में गिरने ही क्यों देते हैं? इसका उत्तर यह है कि यदि परमेश्वर उन्हें ऐसी सुविधाएँ प्रदान न करें तो फिर स्वतन्त्रता का कोई अर्थ नहीं रह जाता | अतः वे सबों को पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान करते हैं – चाहे कोई कुछ करे – किन्तु उनका अन्तिम उपदेश हमें भगवद्गीता में प्राप्त होता है – मनुष्य को चाहिए कि अन्य सारे कार्यों को त्यागकर उनकी शरण में आए | इससे मनुष्य सुखी रहेगा |

तात्पर्य

जीवात्मा तथा देवता दोनों ही परमेश्वर की इच्छा के अधीन हैं, अतः जीवात्मा न तो स्वेच्छा से किसी देवता की पूजा कर सकता है, न ही देवता परमेश्वर की इच्छा के विरुद्ध कोई वर दे सकते हैं जैसी कि कहावत है – 'ईश्वर की इच्छा के बिना एक पत्ती भी नहीं हिलती |' सामान्यतः जो लोग इस संसार में पीड़ित हैं, वे देवताओं के पास जाते हैं, क्योंकि वेदों में ऐसा करने का उपदेश है कि अमुक-अमुक इच्छाओं वाले को अमुक-अमुक देवताओं की शरण में जाना चाहिए | उदाहरणार्थ, एक रोगी को सूर्यदेव की पूजा करने का आदेश है | इसी प्रकार विद्या का इच्छुक सरस्वती की पूजा कर सकता है और सुन्दर पत्नी चाहने वाला व्यक्ति शिवजी की पत्नी देवी उमा की पूजा कर सकता है | इस प्रकार शास्त्रों में विभिन्न देवताओं के पूजन की विधियाँ बताई गई हैं | चूँकि प्रत्येक जीव विशेष सुविधा चाहता है, अतः भगवान् उसे विशेष देवता से उस वर को प्राप्त करने की प्रबल इच्छा की प्रेरणा देते हैं और उसे वर प्राप्त हो जाता है | किसी विशेष देवता के पूजन की विधि भी भगवान् द्वारा ही नियोजित की जाती है | जीवों में वह प्रेरणा देवता नहीं दे सकते, किन्तु भगवान् परमात्मा हैं जो समस्त जीवों के हृदयों में उपस्थित रहते हैं, अतः कृष्ण मनुष्य को किसी देवता के पूजन की प्रेरणा प्रदान करते हैं | सारे देवता परमेश्वर के विराट शरीर के अभिन्न अंगस्वरूप हैं, अतः वे स्वतन्त्र नहीं होते| वैदिक साहित्य में कथन है, "परमात्मा रूप में भगवान् देवता के हृदय में भी स्थित रहते हैं, अतः वे देवता के माध्यम से जीव की इच्छा को पूरा करने की व्यवस्था करते हैं | किन्तु जीव तथा देवता दोनों ही परमात्मा की इच्छा पर आश्रित हैं | वे स्वतन्त्र नहीं हैं |"

22.

bhaktiprasad.in

स तया श्रद्धया युक्तस्तस्याराधनमीहते |
लभते च ततः कामान्मयैव विहितान्हितान् || 7.22 ||

ऐसी श्रद्धा से समन्वित वह देवता विशेष की पूजा करने का यत्न करता है और अपनी इच्छा की पूर्ति करता है | किन्तु वास्तविकता तो यह है कि ये सारे लाभ केवल मेरे द्वारा प्रदत्त हैं

Endowed with such a faith, he seeks favors of a particular demigod and obtains his desires. But in actuality these benefits are bestowed by Me alone.

designed by
DigitalWebdia

तात्पर्य

देवतागण परमेश्वर की अनुमति के बिना अपने भक्तों को वर नहीं दे सकते | जीव भले ही यह भूल जाय कि प्रत्येक वस्तु परमेश्वर की सम्पत्ति है, किन्तु देवता इसे नहीं भूलते | अतः देवताओं की पूजा तथा वांछित फल की प्राप्ति देवताओं के कारण नहीं, अपितु उनके माध्यम से भगवान् के कारण होती है | अल्पज्ञानी जीव इसे नहीं जानते, अतः वे मुर्खतावश देवताओं के पास जाते हैं | किन्तु शुद्धभक्त आवश्यकता पड़ने पर परमेश्वर से ही याचना करता है परन्तु वर माँगना शुद्धभक्त का लक्षण नहीं है | जीव सामान्यता देवताओं के पास इसीलिए जाता है, क्योंकि वह अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए पगलाया रहता है | ऐसा तब होता है जब जीव अनुचित कामना करता है जिसे स्वयं भगवान् पूरा नहीं करते | चैतन्यचरितामृत में कहा गया है कि जो व्यक्ति परमेश्वर की पूजा के साथ-साथ भौतिकभोग की कामना करता है वह परस्पर विरोधी इच्छाओं वाला होता है | परमेश्वर की भक्ति तथा देवताओं की पूजा समान स्तर पर नहीं हो सकती, क्योंकि देवताओं की पूजा भौतिक है और परमेश्वर की भक्ति नितान्त आध्यात्मिक है | जो जीव भगवद्धाम जाने का इच्छुक है, उसके मार्ग में भौतिक इच्छाएँ बाधक हैं | अतः भगवान् के शुद्धभक्त को वे भौतिक लाभ नहीं प्रदान किये जाते, जिनकी कामना अल्पज्ञ जीव करते रहते हैं, जिसके कारण वे परमेश्वर की भक्ति न करके देवताओं की पूजा में लगे रहते हैं |

23.

bhaktiprasad.in

अन्तवत्तुफलंतेषांतद्भवत्यल्पमेधसाम् |
देवान्देवयजोमद्भक्तायान्तिमामपि || 7.23 ||

अल्पबुद्धि वाले व्यक्ति देवताओं की पूजा करते हैं और उन्हें प्राप्त होने वाले फल सीमित तथा क्षणिक होते हैं | देवताओं की पूजा करने वाले देवलोक को जाते हैं, किन्तु मेरे भक्त अन्ततः मेरे परमधाम को प्राप्त होते हैं |

Men of small intelligence worship the demigods, and their fruits are limited and temporary. Those who worship the demigods go to the planets of the demi-gods, but My devotees ultimately reach My supreme planet.

designed by DigitalWebdia

तात्पर्य

भगवद्गीता के कुछ भाष्यकार कहते हैं कि देवता की पूजा करने वाला व्यक्ति परमेश्वर के पास पहुँच सकता है, किन्तु यहाँ यह स्पष्ट कहा गया है कि देवताओं के उपासक भिन्न लोक को जाते हैं, जहाँ विभिन्न देवता स्थित हैं – ठीक उसी प्रकार जिस तरह सूर्य की उपासना करने वाला सूर्य को या चन्द्रमा का उपासक चन्द्रमा को प्राप्त होता है | इसी प्रकार यदि कोई इन्द्र जैसे देवता की पूजा करना चाहता है, तो उसे पूजे जाने वाले उसी देवता का लोक प्राप्त होगा | ऐसा नहीं है कि किसी भी देवता की पूजा करने से भगवान् को प्राप्त किया जा सकता है | यहाँ पर इसका निषेध किया गया है, क्योंकि यह स्पष्ट कहा गया है कि देवताओं के उपासक भौतिक जगत् के अन्य लोकों को जाते हैं, किन्तु भगवान् का भक्त भगवान् के परमधाम को जाता है | यहाँ पर यह प्रश्न उठाया जा सकता है कि यदि विभिन्न देवता परमेश्वर के शरीर के विभिन्न अंग हैं, तो उन सबकी पूजा करने से एक ही जैसा फल मिलना चाहिए | किन्तु देवताओं के उपासक अल्पज्ञ होते हैं, क्योंकि वे यह नहीं जानते कि शरीर के किस अंग को भोजन दिया जाय | उनमें से कुछ इतने मुर्ख होते हैं कि वह यह दावा करते हैं कि अंग अनेक हैं, अतः भोजन देने के ढंग अनेक हैं | किन्तु यह बहुत उचित नहीं है | क्या कोई कानों या आँखों से शरीर को भोजन पहुँचा सकता है? वे यह नहीं जानते कि ये देवता भगवान् के विराट शरीर के विभिन्न अंग हैं और वे अपने अज्ञानवश यह विश्वास कर बैठते हैं कि प्रत्येक देवता पृथक् ईश्वर है और परमेश्वर का प्रतियोगी है |

तात्पर्य

न केवल सारेदेवता, अपितु सामान्य जीव भी परमेश्वर के अंग (अंश) हैं | श्रीमद्भागवत में कहा गया है कि ब्राह्मण परमेश्वर के सिर हैं, क्षत्रिय उनकी बाहें हैं, वैश्य उनकी कटि तथा शुद्र उनके पाँव हैं, और इन सबके अलग-अलग कार्य हैं | यदि कोई देवताओं को तथा अपने आपको परमेश्वर का अंश मानता है तो उसका ज्ञान पूर्ण है | किन्तु यदि वह इसे नहीं समझता तो उसे भिन्न लोकों की प्राप्ति होती है, जहाँ देवतागण निवास करते हैं | यह वह गन्तव्य नहीं है, जहाँ भक्तगण जाते हैं | देवताओं से प्राप्त वर नाशवान होते हैं, क्योंकि इस भौतिक जगत् के भीतर सारे लोक, सारे देवता तथा उनके सारे उपासक नाशवान हैं | अतः इस श्लोक में स्पष्ट कहा गया है कि ऐसे देवताओं की उपासना से प्राप्त होने वाले सारे फल नाशवान होते हैं, अतः ऐसी पूजा केवल अल्पज्ञों द्वारा की जाती है | चूँकि परमेश्वर की भक्ति में कृष्णभावनामृत में संलग्न व्यक्ति ज्ञान से पूर्ण दिव्य आनन्दमय लोक की प्राप्ति करता है अतः उसकी तथा देवताओं के सामान्य उपासक की उपलब्धियाँ पृथक्-पृथक् होती हैं | परमेश्वर असीम हैं, उनका अनुग्रह अनन्त है, उनकी दया भी अनन्त है | अतः परमेश्वर की अपने शुद्धभक्तों पर कृपा भी असीम होती है |

24.

bhaktiprasad.in

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः |
परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम् || 7.24 ||

बुद्धिहीन मनुष्य मुझको ठीक से न जानने के कारण सोचते हैं कि मैं (भगवान् कृष्ण) पहले निराकार था और अब मैंने इस स्वरूप को धारण किया है | वे अपने अल्पज्ञान के कारण मेरी अविनाशी तथा सर्वोच्च प्रकृति को नहीं जान पाते |

Unintelligent men, who know Me not, think that I have assumed this form and personality. Due to their small knowledge, they do not know My higher nature, which is changeless and supreme.

designed by DigitalWebdia

तात्पर्य

देवताओं के उपासकों को अल्पज्ञ कहा गया है | भगवान् कृष्ण अपने साकार रूप में यहाँ पर अर्जुन से बातें कर रहे हैं, किन्तु तब भी निर्विशेषवादी अपने अज्ञान के कारण तर्क करते रहते हैं कि परमेश्वर का अन्ततः स्वरूप नहीं होता | श्रीरामानुजाचार्य की परम्परा के महान भगवद्भक्त यामुनाचार्य ने इस सम्बन्ध में दो अत्यन्त उपयुक्त श्लोक कहे हैं (स्तोत्र रत्न १२) – त्वां शीलरूपचरितैः परमप्रकृष्टैः सत्त्वेन सात्त्विकतया प्रबलैश्च शास्त्रैः | प्रख्यातदैवपरमार्थविदां मतैश्च नैवासुरप्रकृतयः प्रभवन्ति बोद्धुम् || "हे प्रभु! व्यासदेव तथा नारद जैसे भक्त आपको भगवान् रूप में जानते हैं | मनुष्य विभिन्न वैदिक ग्रंथों को पढ़कर आपके गुण, रूप तथा कार्यों को जान सकता है और इस तरह आपको भगवान् के रूप में समझ सकता है | किन्तु जो लोग रजो तथा तमोगुण के वश में हैं, ऐसे असुर तथा अभक्तगण आपको नहीं समझ पाते | ऐसे अभक्त वेदान्त, उपनिषद् तथा वैदिक ग्रंथों की व्याख्या करने में कितने ही निपुण क्यों न हों, वे भगवान् को समझ नहीं पाते |" ब्रह्मसंहिता में यह बताया गया है कि केवल वेदान्त साहित्य के अध्ययन से भगवान् को नहीं समझा जा सकता | परमपुरुष को केवल भगवत्कृपा से जाना जा सकता है | अतः इस श्लोक में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि न केवल देवताओं के उपासक अल्पज्ञ होते हैं, अपितु वे अभक्त भी जो कृष्णभावनामृत से रहित हैं, जो वेदान्त तथा वैदिक साहित्य के अध्ययन में लगे रहते हैं, अल्पज्ञ हैं और उनके लिए ईश्वर के साकार रूप को समझ पाना सम्भव नहीं है |

तात्पर्य

जो लोग परमसत्य को निर्विशेष करके मानते हैं वे अबुद्धयः बताये गये हैं जिसका अर्थ है, वे लोग जो परमसत्य के परम स्वरूप को नहीं समझते | श्रीमद्भागवत में बताया गया है कि निर्विशेष ब्रह्म से ही परम अनुभूति प्रारम्भ होती है जो ऊपर उठती हुई अन्तर्यामी परमात्मा तक जाती है, किन्तु परमसत्य की अन्तिम अवस्था भगवान् है | आधुनिक निर्विशेषवादी तो और भी अधिक अल्पज्ञ हैं, क्योंकि वे पूर्वगामी शंकराचार्य का भी अनुसरण नहीं करते जिन्होंने स्पष्ट बताया है कि कृष्ण परमेश्वर हैं | अतः निर्विशेषवादी परमसत्य को न जानने के कारण सोचते हैं कि कृष्ण देवकी तथा वासुदेव के पुत्र हैं या कि राजकुमार हैं या कि शक्तिमान जीवात्मा हैं | भगवद्गीता में (९.११) भी इसकी भर्त्सना की गई है | अवजानन्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रितम् – केवल मुर्ख ही मुझे सामान्य पुरुष मानते हैं | तथ्य तो यह है कि कोई बिना भक्ति के तथा कृष्णभावनामृत विकसित किये बिना कृष्ण को नहीं समझ सकता | इसकी पुष्टि भागवत में (१०.१४.२९) हुई है – अथापि ते देव पदाम्बुजद्वय प्रसादलेशानुगृहीत एव हि | जानाति तत्त्वं भगवन् महिम्नो न चान्य एकोऽपि चिरं विचिन्वन् || "हे प्रभु! यदि कोई आपके चरणकमलों की रंचमात्र भी कृपा प्राप्त कर लेता है तो वह आपकी महानता को समझ सकता है | किन्तु जो लोग भगवान् को समझने के लिए मानसिक कल्पना करते हैं वे वेदों का वर्षों तक अध्ययन करके भी नहीं समझ पाते |" कोई न तो मनोधर्म द्वारा, न ही वैदिक साहित्य की व्याख्या द्वार भगवान् कृष्ण या उनके रूप को समझ सकता है |

तात्पर्य

किन्तु जो लोग भगवान् को समझने के लिए मानसिक कल्पना करते हैं वे वेदों का वर्षों तक अध्ययन करके भी नहीं समझ पाते |" कोई न तो मनोधर्म द्वारा, न ही वैदिक साहित्य की व्याख्या द्वार भगवान् कृष्ण या उनके रूप को समझ सकता है | भक्ति के द्वारा की उन्हें समझा जा सकता है | जब मनुष्य हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे | हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे – इस महानतम जप से प्रारम्भ करके कृष्णभावनामृत में पूर्णतया तन्मय हो जाता है, तभी वह भगवान् को समझ सकता है | अभक्त निर्विशेषवादी मानते हैं कि भगवान् कृष्ण का शरीर इसी भौतिक प्रकृति का बना है और उनके कार्य, उनका रूप इत्यादि सभी माया हैं | ये निर्विशेषवादी मायावादी कहलाते हैं | ये परमसत्य को नहीं जानते | बीसवें श्लोक से स्पष्ट है – कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्यदेवताः – जो लोग कामेच्छाओं से अन्धे हैं वे अन्य देवताओं की शरण में जाते हैं | यह स्वीकार किया गया है कि भगवान् के अतिरिक्त अन्य देवता भी हैं, जिनके अपने-अपने लोक हैं और भगवान् का भी अपना लोक है | जैसा कि तेईसवें श्लोक में कहा गया है – देवान् देवजयो यान्ति भद्भक्ता यान्ति मामपि – देवताओं के उपासक उनके लोकों को जाते हैं और जो कृष्ण के भक्त हैं वे कृष्णलोक को जाते हैं, किन्तु तो भी मुर्ख मायावादी यह मानते हैं कि भगवान् निर्विशेष हैं और ये विभिन्न रूप उन पर ऊपर से थोपे गये हैं | क्या गीता के अध्ययन से ऐसा प्रतीत होता है कि देवता तथा उनके धाम निर्विशेष हैं? स्पष्ट है कि न तो देवतागण, न ही कृष्ण निर्विशेष हैं | वे सभी व्यक्ति हैं | भगवान् कृष्णपरमेश्वर हैं, उनका अपना लोक है और देवताओं के भी अपने-अपने लोक हैं |

तात्पर्य

अतः यह अद्वैतवादी तर्क कि परमसत्य निर्विशेष है और रूप ऊपर से थोपा (आरोपित) हुआ है, सत्य नहीं उतरता | यहाँ स्पष्ट बताया गया है कि यह ऊपर से थोपा हुआ नहीं है | भगवद्गीता से हम स्पष्टतया समझ सकते हैं कि देवताओं के रूप तथा परमेश्वर का स्वरूप साथ-साथ विद्यमान हैं और भगवान् कृष्ण सच्चिदानन्द रूप हैं | वेद भी पुष्टि करते हैं कि परमसत्य आनन्दमयोऽभ्यासात्– अर्थात् वे स्वभाव से ही आनन्दमय हैं और वे अनन्त शुभ गुणों के आगार हैं | गीता में भगवान् कहते हैं कि यद्यपि वे अज (अजन्मा) हैं, तो भी वे प्रकट होते हैं | भगवद्गीता से हम इस सारे तथ्यों को जान सकते हैं | अतः हम यह नहीं समझ पाते कि भगवान् किस तरह निर्विशेष हैं? जहाँ तक गीता के कथन हैं, उनके अनुसार निर्विशेषवादी अद्वैतवादियों का यह आरोपित सिद्धान्त मिथ्या है | यहाँ स्पष्ट है कि परमसत्य भगवान् कृष्ण के रूप और व्यक्तित्व दोनों हैं |

25.

bhaktiprasad.in

नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः |
मूढोऽयं नाभिजानाति लोको मामजमव्ययम् || 7.25 ||

मैं मूर्खों तथा अल्पज्ञों के लिए कभी भी प्रकट नहीं हूँ | उनके लिए तो मैं अपनी अन्तरंगा शक्ति द्वारा आच्छादित रहता हूँ, अतः वे यह नहीं जान पाते कि मैं अजन्मा तथा अविनाशी हूँ |

I am never manifest to the foolish and unintelligent. For them I am covered by My eternal creative potency [yoga-māyā]; and so the deluded world knows Me not, who am unborn and infallible.

designed by
DigitalWebdia

तात्पर्य

यह तर्क दिया जा सकता है कि जब कृष्ण इस पृथ्वी पर विद्यमान थे और सबों के लिए दृश्य थे तो अब वे सबों के समक्ष क्यों नहीं प्रकट होते? किन्तु वास्तव में वे हर एक के समक्ष प्रकट नहीं थे | जब कृष्ण विद्यमान थे तो उन्हें भगवान् रूप में समझने वाले व्यक्ति थोड़े ही थे | जब कुरु सभा में शिशुपाल ने कृष्ण के समाध्यक्ष चुने जाने पर विरोध किया तो भीष्म ने कृष्ण का समर्थन किया और उन्हें परमेश्वर घोषित किया | इसी प्रकार पाण्डव तथा कुछ अन्य लोग उन्हें परमेश्वर के रूप में जानते थे, किन्तु सभी ऐसे नहीं थे | अभक्तों तथा सामान्य व्यक्ति के लिए वे प्रकट नहीं थे | इसीलिए भगवद्गीता में कृष्ण कहते हैं कि उनके विशुद्ध भक्तों के अतिरिक्त अन्य सारे लोग उन्हें अपनी तरह समझते हैं | वे अपने भक्तों के समक्ष आनन्द के आगार के रूप में प्रकट होते थे, किन्तु अन्यों के लिए, अल्पज्ञ अभक्तों के लिए, वे अपनी अन्तरंगा शक्ति से आच्छादित रहते थे | श्रीमद्भागवत में (१.८.१९) कुन्ती ने अपनी प्रार्थना में कहा है कि भगवान् योगमाया के आवरण से आवृत हैं, अतः सामान्य लोग उन्हें समझ नहीं पाते | ईशोपनिषद् में (मन्त्र १५) भी इस योगमाया आवरण की पुष्टि हुई है, जिससे भक्त प्रार्थना करता है –

तात्पर्य

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम् | तत्त्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये ||

"हे भगवान! आप समग्र ब्रह्माण्ड के पालक हैं और आपकी भक्ति सर्वोच्च धर्म है | अतः मेरी प्रार्थना है कि आप मेरा भी पालन करें | आपका दिव्यरूप योगमाया से आवृत है | ब्रह्मज्योति आपकी अन्तरंगा शक्ति का आवरण है | कृपया इस तेज को हटा ले क्योंकि यह आपके सच्चिदानन्द विग्रह के दर्शन में बाधक है |" भगवान् अपने दिव्य सच्चिदानन्द रूप में ब्रह्मज्योति की अन्तरंगाशक्ति से आवृत हैं, जिसके फलस्वरूप अल्पज्ञानी निर्विशेषवादी परमेश्वर को नहीं देख पाते | श्रीमद्भागवत में भी (१०.१४.७) ब्रह्मा द्वारा की गई यह स्तुति है – "हे भगवान्, हे परमात्मा, हे समस्त रहस्यों के स्वामी! संसार में ऐसा कौन है जो आपकी शक्ति तथा लीलाओं का अनुमान लगा सके? आप सदैव अपनी अन्तरंगाशक्ति का विस्तार करते रहते हैं, अतः कोई भी आपको नहीं समझ सकता | विज्ञानी तथा विद्वान भले ही भौतिक जगत् की परमाणु संरचना का या कि विभिन्न ग्रहों का अन्वेषण कर लें, किन्तु अपने समक्ष आपके विद्यमान होते हुए भी वे आपकी शक्ति की गणना करने में असमर्थ हैं |" भगवान् कृष्ण न केवल अजन्मा हैं, अपितु अव्यय भी हैं | वे सच्चिदानन्द रूप हैं और उनकी शक्तियाँ अव्यय हैं |

26.

bhaktiprasad.in

वेदाहं समतीतानि वर्तमानानि चार्जुन |
भविष्याणि च भूतानि मां तु वेद न कश्चन || 7.26 ||

हे अर्जुन ! श्रीभगवान् होने के नाते मैं जो कुछ भूतकाल में घटित हो चुका है, जो वर्तमान में घटित हो रहा है और जो आगे होने वाला है, वह सब कुछ जानता हूँ | मैं समस्त जीवों को भी जानता हूँ, किन्तु मुझे कोई नहीं जानता |

O Arjuna, as the Supreme Personality of Godhead, I know everything that has happened in the past, all that is happening in the present, and all things that are yet to come. I also know all living entities; but Me no one knows.

designed by
DigitalWebdia

तात्पर्य

यहाँ पर साकारता तथा निराकारता का स्पष्ट उल्लेख है | यदि भगवान् कृष्ण का स्वरूप माया होता, जैसा कि मायावादी मानते हैं, तो उन्हें भी जीवात्मा की भाँति अपना शरीर बदलना पड़ता और विगत जीवन के विषय में सब कुछ विस्मरण हो जाता | कोई भी भौतिक देहधारी अपने विगत जीवन की स्मृति बनाये नहीं रख पाता, न ही वह भावी जीवन के विषय में या वर्तमान जीवन की उपलब्धि के विषय में भविष्यवाणी कर सकता है | अतः वह यह नहीं जानता कि भूत, वर्तमान तथा भविष्य में क्या घट रहा है | भौतिक कल्मष से मुक्त हुए बिना वह ऐसा नहीं कर सकता | सामान्य मनुष्यों से भिन्न, भगवान् कृष्ण स्पष्ट कहते हैं कि वे यह भलीभाँति जानते हैं कि भूतकाल में क्या घटा, वर्तमान में क्या हो रहा है और भविष्य में क्या होने वाला है लेकिन सामान्य मनुष्य ऐसा नहीं जानते हैं | चतुर्थ अध्याय में हम देख चुके हैं कि लाखों वर्ष पूर्व उन्होंने सूर्यदेव विवस्वान को जो उपदेश दिया था वह उन्हें स्मरण है | कृष्ण प्रत्येक जीव को जानते हैं क्योंकि वे सबों के हृदय में परमात्मा रूप में स्थित हैं | किन्तु अल्पज्ञानी प्रत्येक जीव के हृदय में परमात्मा रूप में स्थित होने तथा श्रीभगवान् के रूप में उपस्थित रहने पर भी श्रीकृष्ण को परमपुरुष के रूप में नहीं जान पाते, भले ही वे निर्विशेष ब्रह्म को क्यों न समझ लेते हों | निस्सन्देह श्रीकृष्ण का दिव्य शरीर अनश्वर है | वे सूर्य के समान हैं और माया बादल के समान है | भौतिक जगत में हम सूर्य को देखते हैं, बादलों को देखते हैं और विभिन्न नक्षत्र तथा ग्रहों को देखते हैं | आकाश में बादल इन सबों को अल्पकाल के लिए ढक सकता है, किन्तु यह आवरण हमारी दृष्टि तक ही सीमित होता है | सूर्य, चन्द्रमा तथा तारे सचमुच ढके नहीं होते | इसी प्रकार माया परमेश्वर को आच्छादित नहीं कर सकती | वे अपनी अन्तरंगा शक्ति के कारण अल्पज्ञों को दृश्य नहीं होते | जैसा कि इस अध्याय के तृतीय श्लोक में कहा गया है कि करोड़ों पुरुषों में से कुछ ही सिद्ध बनने का प्रयत्न करते हैं और सहस्रों ऐसे सिद्ध पुरुषों में से कोई एक भगवान् कृष्ण को समझ पाता है | भले ही कोई निराकार ब्रह्म या अन्तर्यामी परमात्मा की अनुभूति के कारण सिद्ध हो ले, किन्तु कृष्णभावनामृत के बिना वह भगवान् श्रीकृष्ण को समझ ही नहीं सकता |

27.

bhaktiprasad.in

इच्छाद्वेषसमुत्थेन द्वन्द्वमोहेन भारत |
सर्वभूतानि सम्मोहं सर्गे यान्ति परन्तप || 7.27 ||

हे भरतवंशी! हे शत्रुविजेता! समस्त जीव जन्म लेकर इच्छा तथा घृणा से उत्पन्न द्वन्द्वों से मोहग्रस्त होकर मोह को प्राप्त होते हैं |

O scion of Bharata [Arjuna], O conquerer of the foe, all living entities are born into delusion, overcome by the dualities of desire and hate.

designed by
DigitalWebdia

तात्पर्य

जीव की स्वाभाविक स्थिति शुद्धज्ञान रूप परमेश्वर की अधीनता है | मोहवश जब मनुष्य इस शुद्धज्ञान से दूर हो जाता है तो वह माया के वशीभूत हो जाता है और भगवान् को नहीं समझ पाता | यह माया इच्छा तथा घृणा के द्वन्द्व रूप में प्रकट होती है | इसी इच्छा तथा घृणा के कारण मनुष्य परमेश्वर से तदाकार होना चाहता है और भगवान् के रूप में कृष्ण से ईर्ष्या करता है | किन्तु शुद्धभक्त इच्छा तथा घृणा से मोहग्रस्त नहीं होते अतः वे समझ सकते हैं कि भगवान् श्रीकृष्ण अपनी अन्तरंगाशक्ति से प्रकट होते हैं | पर जो द्वन्द्व तथा अज्ञान के कारण मोहग्रस्त हैं, वे सोचते हैं कि भगवान् भौतिक (अपरा) शक्तियों द्वारा उत्पन्न होते हैं | यही उनका दुर्भाग्य है | ऐसे मोहग्रस्त व्यक्ति मान-अपमान, दुख-सुख, स्त्री-पुरुष, अच्छा-बुरा, आनन्द-पीड़ा जैसे द्वन्द्वों में रहते हुए सोचते रहते हैं "यह मेरी पत्नी है, यह मेरा घर है, मैं इस घर का स्वामी हूँ, मैं इस स्त्री का पति हूँ |" ये ही मोह के द्वन्द्व हैं | जो लोग ऐसे द्वन्द्वों से मोहग्रस्त रहते हैं, वे निपट मुर्ख हैं और वे भगवान् को नहीं समझ सकते |

28.

bhaktiprasad.in

येषां त्वन्तगतं पापं जनानां पुण्यकर्मणाम् |
ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ता भजन्ते मां दृढव्रताः || 7.28 ||

जिन मनुष्यों ने पूर्वजन्मों में तथा इस जन्म में पुण्यकर्म किये हैं और जिनके पापकर्मों का पूर्णतया उच्छेदन हो चुका होता है, वे मोह के द्वन्द्वों से मुक्त हो जाते हैं और वे संकल्पपूर्वक मेरी सेवा में तत्पर होते हैं |

Persons who have acted piously in previous lives and in this life, whose sinful actions are completely eradicated and who are freed from the duality of delusion, engage themselves in My service with determination.

designed by
DigitalWebdia

तात्पर्य

इस अध्याय में उन लोगों का उल्लेख है जो दिव्य पद को प्राप्त करने के अधिकारी हैं | जो पापी, नास्तिक, मूर्ख तथा कपटी हैं उनके लिए इच्छा तथा घृणा के द्वन्द्व को पार कर पाना कठिन है | केवल ऐसे पुरुष भक्ति स्वीकार करके क्रमशः भगवान् के शुद्धज्ञान को प्राप्त करते हैं, जिन्होंने धर्म के विधि-विधानों का अभ्यास करने, पुण्यकर्म करने तथा पापकर्मों के जीतने में अपना जीवन लगाया है | फिर वे क्रमशः भगवान् का ध्यान समाधि में करते हैं | आध्यात्मिक पद पर आसीन होने की यही विधि है | शुद्धभक्तों की संगति में कृष्णभावनामृत के अन्तर्गत ही ऐसी पद प्राप्ति सम्भव है, क्योंकि महान भक्तों की संगति से ही मनुष्य मोह से उबर सकता है | श्रीमद्भागवत में (५.५.२) कहा गया है कि यदि कोई सचमुच मुक्ति चाहता है तो उसे भक्तों की सेवा करनी चाहिए (महत्सेवां द्वारमाहुर्विमुक्तेः), किन्तु जो भौतिकतावादी पुरुषों की संगति करता है वह संसार के गहन अंधकार की ओर अग्रसर होता रहता है (तमोद्वारं योषितां सङ्गिसङ्गम्) | भगवान् के सारे भक्त विश्व भर का भ्रमण इसीलिए करते हैं जिससे वे बद्धजीवों को उनके मोह से उबार सकें | मायावादी यह नहीं जान पाते कि परमेश्वर के अधीन अपनी स्वाभाविक स्थिति को भूलना ही ईश्वरीय नियम की सबसे बड़ी अवहेलना है | जब तक वह अपनी स्वाभाविक स्थिति को पुनः प्राप्त नहीं कर लेता, तब तक परमेश्वर को समझ पाना या संकल्प के साथ उनकी दिव्य प्रेमाभक्ति में पूर्णतया प्रवृत्त हो पाना कठिन है |

29.

bhaktiprasad.in

जरामरणमोक्षाय मामाश्रित्य यतन्ति ये |
ते ब्रह्म तद्विदुः कृत्स्नमध्यात्मं कर्म चाखिलम् || 7.29 ||

जो जरा तथा मृत्यु से मुक्ति पाने के लिए यत्नशील रहते हैं, वे बुद्धिमान व्यक्ति मेरी भक्ति की शरण ग्रहण करते हैं | वे वास्तव में ब्रह्म हैं क्योंकि वे दिव्य कर्मों के विषय में पूरी तरह से जानते हैं |

Intelligent persons who are endeavoring for liberation from old age and death take refuge in Me in devotional service. They are actually Brahman because they entirely know everything about transcendental and fruitive activities.

designed by
DigitalWebdia

तात्पर्य

जन्म, मृत्यु, जरा तथा रोग इस भौतिक शरीर को सताते हैं, आध्यात्मिक शरीर को नहीं | आध्यात्मिक शरीर के लिए न जन्म है, न मृत्यु, न जरा, न रोग | अतः जिसे आध्यात्मिक शरीर प्राप्त हो जाता है वह भगवान् का पार्षद बन जाता है और नित्य भक्ति करता है | वही मुक्त है | अहंब्रह्मास्मि– मैं आत्मा हूँ | कहा गया है कि मनुष्य को चाहिए कि वह यह समझे कि मैं ब्रह्म या आत्मा हूँ | शुद्धभक्त ब्रह्म पद पर आसीन होते हैं और वे दिव्य कर्मों के विषय में सब कुछ जानते रहते हैं | भगवान् की दिव्यसेवा में रत रहने वाले चार प्रकार के अशुद्ध भक्त हैं जो अपने-अपने लक्ष्यों को प्राप्त करते हैं और भगवत्कृपा से जब वे पूर्णतया कृष्णभावनाभावित हो जाते हैं, तो परमेश्वर की संगति का लाभ उठाते हैं | किन्तु देवताओं के उपासक कभी भी भगवद्धाम नहीं पहुँच पाते | यहाँ तक कि अल्पज्ञ ब्रह्मभूत व्यक्ति भी कृष्ण के परमधाम, गोलोक वृन्दावन को प्राप्त नहीं कर पाते | केवल ऐसे व्यक्ति जो कृष्णभावनामृत में कर्म करते हैं (माम् आश्रित्य) वे ही ब्रह्म कहलाने के अधिकारी होते हैं, क्योंकि वे सचमुच ही कृष्णधाम पहुँचने के लिए प्रयत्नशील रहते हैं | ऐसे व्यक्तियों को कृष्ण के विषय में कोई भ्रान्ति नहीं रहती और वे सचमुच ब्रह्म हैं | जो लोग भगवान् के अर्चा (स्वरूप) की पूजा करने में लगे रहते हैं या भवबन्धन से मुक्ति पाने के लिए निरन्तर भगवान् का ध्यान करते हैं, वे भी ब्रह्म अधिभूत आदि के तात्पर्य को समझते हैं, जैसा कि भगवान् ने अगले अध्याय में बताया है |

30.

bhaktiprasad.in

साधिभूताधिदैवं मां साधियज्ञं च ये विदु : |
प्रयाणकालेऽपि च मां ते विदुर्युक्तचेतसः || 7.30 ||

जो मुझ परमेश्वर को मेरी पूर्ण चेतना में रहकर मुझे जगत् का, देवताओं का तथा समस्त यज्ञविधियों का नियामक जानते हैं, वे अपनी मृत्यु के समय भी मुझ भगवान् को जान और समझ सकते हैं |

Those who know Me as the Supreme Lord, as the governing principle of the material manifestation, who know Me as the one underlying all the demigods and as the one sustaining all sacrifices, can, with steadfast mind, understand and know Me even at the time of death.

designed by
DigitalWebdia

तात्पर्य

कृष्णभावनामृत में कर्म करने वाले मनुष्य कभी भी भगवान् को पूर्णतया समझने के पथ से विचलित नहीं होते | कृष्णभावनामृत के दिव्य सान्निध्य से मनुष्य यह समझ सकता है कि भगवान् किस तरह भौतिक जगत् तथा देवताओं तक के नियामक हैं | धीरे-धीरे ऐसी दिव्य संगति से मनुष्य का भगवान् में विश्वास बढ़ता है, अतः मृत्यु के समय ऐसा कृष्णभावनाभावित व्यक्ति कृष्ण को कभी भुला नहीं पाता | अतएव वह सहज ही भगवद्धाम गोलोक वृन्दावन को प्राप्त होता है | यह सातवाँ अध्याय विशेष रूप से बताता है कि कोई किस प्रकार से पूर्णतया कृष्णभावनाभावित हो सकता है | कृष्णभावना का शुभारम्भ ऐसे व्यक्तियों के सान्निध्य से होता है जो कृष्णभावनाभावित होते हैं | ऐसा सान्निध्य आध्यात्मिक होता है और इससे मनुष्य प्रत्यक्ष भगवान् के संसर्ग में आता है और भगवत्कृपा से वह कृष्ण को भगवान् समझ सकता है | साथ ही वह जीव के वास्तविक स्वरूप को समझ सकता है और यह समझ सकता है कि किस प्रकार कृष्ण को भुलाने से वह प्रकृति के नियमों द्वारा बद्ध हुआ है | वह यह भी समझ सकता है कि यह मनुष्य-जीवन कृष्णभावनामृत को पुनः प्राप्त करने के लिए मिला है, अतः इसका सदुपयोग परमेश्वर की अहैतुकी कृपा प्राप्त करने के लिए करना चाहिए | इस अध्याय में जिन अनेक विषयों की विवेचना की गई है वे हैं – दुख में पड़ा हुआ मनुष्य, जिज्ञासु मानव, अभावग्रस्त मानव, ब्रह्म ज्ञान, परमात्मा ज्ञान, जन्म, मृत्यु तथा रोग से मुक्ति एवं परमेश्वर की पूजा | किन्तु जो व्यक्ति वास्तव में कृष्णभावनामृत को प्राप्त है, वह विभिन्न विधियों की परवाह नहीं करता | वह सीधे कृष्णभावनामृत में प्रवृत्त होता है और उसी से भगवान् कृष्ण के नित्य दास के रूप में अपनी स्वाभाविक स्थिति को प्राप्त करता है | ऐसी अवस्था में वह शुद्धभक्ति में परमेश्वर के श्रवण तथा गुणगान में आनन्द पाता है | उसे पूर्णविश्वास रहता है कि ऐसा करने से उसके सारे उद्देश्यों की पूर्ति होगी | ऐसी दृढ़ श्रद्धा दृढव्रत कहलाती है और यह भक्तियोग या दिव्य प्रेमाभक्ति की शुरुआत होती है | समस्त शास्त्रों का भी यही मत है | भगवद्गीता का यह सातवाँ अध्याय इसी निश्चय का सारांश है |

हरे कृष्ण

|| इस प्रकार श्रीमद्भगवद्गीता के सातवें अध्याय

"भगवद्ज्ञान" का भक्तिवेदान्त तात्पर्य पूर्ण हुआ |

||

निताई गौर हरी बोल

DigitalWebdia